प्रभावना

सन्मार्ग-प्रभावना-काव्य

श्री अन्तादि शतक

विनयांजलि

रचयिता-
धर्म प्रभावक आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागरजी महाराज

सन् 1984

सन् 1984

सन् 1987, आहारजी

सन् 1988, सोनागिरी

सन् 1988, सोनागिरी

सन् 1989, कुंडलपुर

सन् 2003,सदलगा

सन् 1989, कुंडलपुर

1993, श्रवणबेलगोला

सन् 1989, जवेरा

सन् 1988

सन् 2014, हरदा

सन् 1990,मुक्तागिरी

प्रभावना

- सन्मार्ग-प्रभावना-काव्य
- श्री अन्तादि शतक
- विद्या गुरु विन्यांजलि (विद्यांजलि)...

रचयिता-

प. पू. *आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज*

प्रकाशक

आर्जव-तीर्थ एवं जीव-संरक्षण ट्रस्ट

कृति – **प्रभावना**

रचयिता – आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज

प्रथम संस्करण– सन् 2024

पावन सन्दर्भ – प.पू. आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज का 36 वाँ मुनि दीक्षा दिवस समारोह एवं महावीर जयंती पर्व, विदिशा (म.प्र.)

पुण्यार्जक –● डॉ. विकाश जैन डॉ. अपेक्षा जैन
निवारण हास्पिटल विदिशा,
● श्रीमान नीरज-वंदना जैन, कलेक्ट्रेट अशोकनगर
● डॉ. निर्मल जैन, कदवाया (अशोकनगर)

प्रतियाँ – 1000

प्रकाशक – आर्जव-तीर्थ एवं जीव संरक्षण-ट्रस्ट
4, लार्ड्स कैम्पस, लक्ष्मी परिसर, नहर के पास
बावड़ियाकलाँ, भोपाल-462039
मो. : 7049004653, 9425011357,
9425601161, 9425601832, 7222963457

मुद्रक – पारस प्रिंटर्स, भोपाल
207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1
एम.पी.नगर, भोपाल
फोन : 0755-4260034, 9826240876

प्रस्तावना

डॉ अजित कुमार जैन

प्रस्तुत नवीन कृति 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' की रचना, प्रातः स्मरणीय संत शिरोमणि आचार्यप्रवरश्री 108 विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित वात्सल्य मूर्ति आध्यात्मिक संत परम पूज्य आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज ने उक्त कृति की रचना का मनन, चिंतन और भावपूर्ण परिमार्जन अशोक नगर (म. प्र.) चातुर्मास 2023 के दौरान चलता रहा और चातुर्मास के अंत में इस काव्य की सम्पूर्णता हो गई। चातुर्मास के उपरांत गोलाकोट अतिशय क्षेत्र की ओर विहार के समय खनियांधाना (म.प्र.) प्रवास में इसका रचना कार्य पूर्ण हुआ। एक अनूठी कृति में 'अंतादि शतक' की रचना भक्तों को आत्म पुरुषार्थ करने के लिए प्रेरणादायक सौगात प्रसूत हुई है ।

आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ने प्रस्तुत कृति में सभी भक्तों/श्रद्धालुओं के द्वारा जीवन में किए गए सदाचार पूर्वक धार्मिक कर्मों जैसे व्रतमय जीवन-यापन, तीर्थ यात्रा, सत्संग आदि पुरुषार्थ करने के लिए सरल, सरस, मधुर, मनमोहक, सुबोध, प्रवाहमय भाषा द्वारा भावमय सुंदर अभिव्यक्ति देकर पाठकों के लिए सुवाच्य और सुपाच्य बना दिया है ।ईसरी (साक्षात तीर्थराज श्री सम्मेद शिखरजी सिद्ध क्षेत्र स्थित) चातुर्मास 2022 में आरम्भ करने का संकल्प किया । आचार्य महाराज ने जहां एक ओर अपनी साधना एवं तपस्या के बल पर आत्म कल्याण में लगे रहे वहीं दूसरी ओर समाज के सर्वांगीय कल्याण के लिए दिशा बोध देने के लिए इस रचना का सृजन किया है ।

परम पूज्य आचार्य संघ के चरणारविन्द में शत् शत् नमन, वंदन, आभार ।

इत्यलं ।

डॉ अजित कुमार जैन, संपादक- भाव विज्ञान पत्रिका, भोपाल ।
9425601161, 7222963457

विषय-सूची

क्र.	विषय	पृष्ठ सं
1	जिनमार्ग प्रदर्शक : सन्मार्ग प्रभावना काव्य	V
2.	जैसा आदि; वैसा अंत : श्री अन्तादि शतक	X
3.	सन्मार्ग प्रभावना काव्य	1–42
4.	श्री अन्तादि शतक	45–57
5.	विद्या गुरु विनयांजलि	61–74

जिनमहिमा प्रदर्शक : सन्मार्ग प्रभावना काव्य

इंजी. बहिन ऋषिका जैन, दमोह
(B.E, M.A, Phd. संलग्न)

जिनशासन की गरिमा को प्रकाशित करने वाला, सर्व जगत् का कल्याण करने वाला 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' एक अद्वितीय कृति है; **जिसके लेखक तप ज्ञान प्रभावक आचार्य गुरुदेव श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज हैं।**

सन्मार्ग अर्थात् वह मार्ग जिसके द्वारा भव्य जीव शुद्ध बुद्ध बने। उस सत् मार्ग अर्थात् मोक्ष मार्ग की प्रभावना को कहने वाला काव्य 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' है।

इस 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' में आचार्य भगवन् ने; वर्ष भर में आने वाले पर्व / त्योहार, कल्याणक, तिथियाँ, पंचकल्याणक-विधान, आदि के साथ-साथ सभी धार्मिक स्तोत्र, पाठ, और सिद्धक्षेत्र-अतिशयक्षेत्र की महिमा व आयोजित कार्यक्रमों (पाठशाला सम्मेलन, संगोष्ठी) आदि को पद्य रूप में वर्णित किया है। यह अलौकिक काव्य संपूर्ण जनमानस के साथ-साथ सभी विद्वानों / पण्डितों / प्रवचनकारों को अति महत्वपूर्ण है। क्योंकि इस 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' के माध्यम से वे विद्वतजन जैन धर्म के संबंध में उसी context की महिमा का ज्ञान प्राप्त उस पर अपना वक्तव्य प्रस्तुत कर सकते हैं एवं context संबंधी कुछ पंक्तियों का प्रयोग मुक्तक रूप में कर सकते हैं।

सन्मार्ग प्रभावना काव्य में सर्वप्रथम भगवान महावीर को नमस्कार कर मंगलाचरण किया है। उसके बाद हम सबके पूज्यनीय **देव-शास्त्र-गुरु की महिमा** का गान कर वर्षायोग के महत्व का ज्ञान कर उसमें आने वाले पर्व जैसे- **मोक्षसप्तमी वीर शासन जयंती पर्व,** संबंधी सुंदर पद्यों

का संयोजन है। इसके बाद इसी काव्य में **सत्तर (70) तरह की भावनाओं,** ध्यान के **भेद-प्रभेद, संगोष्ठी** आदि कार्यक्रमों का एवं **रक्षाबंधन पर्व की महिमा** का अलवोकन कराने वाले पद्यों का अति सुंदरतम वर्णन है। उसी क्रम में **महापुरुषों से पूज्य तिथियों का महत्व, सप्त परम स्थान, अष्ट-प्रवचन मातृकाएँ, ईर्यापथ-प्रतिष्ठापन** आदि **अष्ट शुद्धियाँ** भी विशेष रूप से पद्य के माध्यम से वर्णित हैं।

आचार्य परमेष्ठी श्री आर्जवसागर जी महाराज ने इस unique कृति 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' में भाद्रपद माह में आने वाले चा.च. **आचार्य शांतिसागर जी महाराज के समाधि दिवस, षोडस-कारण पर्व की महिमा** एवं **सोलह भावना** एवं **दशलक्षण पर्व की महिमा** एवं **दश धर्म, रत्नत्रय व्रत पर्व, क्षमावाणी-पर्व** आदि का एवं अंत में आयोजित **विमानोत्सव-रथयात्रा** हेतु पद्यों का संयोजन बहुत ही सुंदर ढंग से किया है। इसके बाद पाठशाला के बच्चों संबंधी **संस्कार-भावना, संस्कार की महत्ता, पाठशाला सम्मेलन** का प्रस्तुतिकरण तो बड़ा ही महत्वपूर्ण है। **संस्कार भावना** की पंक्तियाँ तो इतनी उपयोगी है कि जो पढ़कर उसे आचरण में उतार ले, उसका जीवन महान बन जाये। इसी क्रम में **समवशरण भावना** के पद्य भी मनमोहित करने वाले हैं। उसे पढ़कर ऐसा लगता है मानों साक्षात् समवशरण में ही भगवान की स्तुति करने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा हो। इसके बाद वर्षायोग के अन्त में आने वाले **दीपावली पर्व, धन्य त्रयोदशी** एवं **पिच्छिका परिवर्तन** के अति उपयोगी पद्यों का समायोजन गुरुदेव ने करके हम सब पर बहुत बड़ा उपकार किया है। चातुर्मासोपरांत आने वाले **अष्टाह्निका पर्व की महिमा** एवं **सिद्धचक्र महिमा** का मंगलमय गान भगवान की भक्ति करने का सुंदरतम माध्यम ज्ञात होता है। इसी क्रम में **प्रथम तीर्थ भावना, भ.आदिनाथ के**

जीवन कृत्त की महिमा का ज्ञान कराने वाली **ऋषभदेव वैभव** रूप कविता, एवं उनकी **पञ्चकल्याणक तिथियाँ** तदुपरांत **भगवान महावीर के जन्म कल्याणक महोत्सव** का दिग्दर्शन कराने वाली **महावीर जयंती, अक्षय तृतीया पर्व,** जिनवाणी की महिमा का बोध कराने वाला **श्रुत-पञ्चमी-पर्व-महोत्सव** के रूप में पद्यो का प्रस्तुतिकरण बड़ा ही अद्‌भुत है।

इसी '**सन्मार्ग प्रभावना कृति**' में शास्त्राध्यन-महिमा रूप पद्यों की रचना जिसमें जैनागम के सभी ग्रन्थों एवं गुरुदेव रचित सभी कृतियों के नाम दर्शित किये गये हैं। एवं इसी क्रम के अंतर्गत **साधु-साधना एवं सावधानी, साधु सेवा का फल, धर्म-परिक्षण, धर्म-पालन का फल** एवं जैनागम के अंतर्गत भगवान की भक्ति-स्तुति करने वाले सभी प्रमुख **स्तोत्र/भावनाएँ** एवं उनसे होने वाले **अतिशय, भक्ति का फल** भी पद्य रूप से बहुत से सुंदर ढंग से सरल लिपि में वर्णित है। गुरुजी ने प्रभु भक्ति के अतिशय रूप पद्यों के बाद तीर्थों का दिग्दर्शन कराने वाली **तीर्थ-भावना, पञ्च-महातीर्थ वंदन, सिद्धक्षेत्र** और **अतिशय क्षेत्रों** के वंदन स्वरूप पद्यों की रचना कर एक महान कृति 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' का सृजन किया है।

इस काव्य को लिखकर आत्म साधना के हिमालय आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज ने लोक उपकारक कार्य करके जैन धर्म का प्रभाव और उसकी प्रभावना को साधारण जनता में फैलाने का प्रयास किया है। साथ ही व्यक्तित्व प्रभाव गुरुदेव ने इस अद्वितीय कृति 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य' के माध्यम से मोक्ष मार्ग, सत्य-मार्ग, अहिंसा-मार्ग अर्थात् वह मार्ग जिसके द्वारा हमारी आत्मा शुद्ध बने; को बताने का भी प्रयास किया है।

जिन माहत्म्य प्रभावक आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज एक

ऐसे व्यक्तित्व है; जिनका प्रभाव न केवल जन सामान्य अथवा विद्वत्वर्ग पर पड़ा है, अपितु किसी न किसी रूप में उनके पूर्वकालिक, समकालिक एवं वर्तमान समयी श्रमणों पर भी दिखाई देता है। आचार्य भगवन् को चाहे वे मुनि-आर्यिकाएँ हो अथवा व्रतीगण हो सभी लोग उन्हें महावीर भगवान के नाम से जानते हैं। जिनका मन सदैव आत्म साधना में अग्रसर रहता है। आचार्यश्री जी का जो मन है, उनकी जो वाणी है और उनका जो तन है उन पर उनका कमाल का संयम है। बस इन तीन शब्दों में ही उनका जीवन आ जाता है किन्हें सामायिक में बैठे देख लें तो उनमें भगवान महावीर की मूरत दिखाई देती है। गुरुवर के संबंध में जितना कहें उतना कम है। शब्द छोटे हैं, साधक बड़े हैं। भाषा कम है, साधना बहुत बड़ी है। गुरुजी का जीवन हम सभी के लिये आदर्श है। आचार्यश्री जी के सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र और तप आराधना से जिस प्रकार जिनधर्म की प्रभावना हुई है उससे संपूर्ण विश्व प्रभावित हुआ है।

यह कृति गुरुदेव की लेखनी के माध्यम से सन् 2023 के पावन वर्षायोग के काल में अशोकनगर (म.प्र.) में रची गई। जो कि अशोकनगर चातुर्मास में हुई धर्म प्रभावना की उपलब्धि के माध्यम स्वरूप सिद्ध हुई। इस तरह आचार्य भगवंत की साहित्य साधना विपुल है। आप अपने वचनामृतों के माध्यम से जन्मकल्याणक में निरत रहते हुये व साधना की उच्चतम सीढ़ियों पर आरोहण करते हुये गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज ने समग्र देश के करीब 14 प्रांतों में पद विहार कर सम्यग्दर्शन का परचम फैलाकर जैनधर्म की अभूतपूर्व प्रभावना की है। गुरुदेव रचित सभी काव्यों में अनेक सूक्तियाँ भरी पड़ी हैं जिनमें देव-शास्त्र-गुरु की महिमा के साथ-साथ आधुनिक समस्याओं की व्याख्या तथा समाधान भी है, जीवन के सन्दर्भों में मर्मस्पर्शी वक्तव्य भी है। सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक

क्षेत्रों में व्याप्त कुसंस्कार, कुरीतियों का निदर्शन भी है।

सर्व जगत् का कल्याण करने वाला यह 'सन्मार्ग प्रभावना काव्य कृति' को रचने वाले मम् आराध्य गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज के चरणों में बारंबार नमोस्तु निवेदित कर उन्हें प्रणाम करती हूँ।

गुणधारी है परम पूज्य हैं, गुण अनंत के धाम गुरु।
धर्म ध्वजा को फहराते हैं, लगते जैसे वीर प्रभु।
जगत् पूज्य श्री आर्जवसागर, गुरु को मेरा हो वंदन।
विद्यार्जव गुरु के चरणों में, शत् शत् करते अभिनंदन॥

कलयुग में सतयुग की चर्या, शिखरमणी के धारक।
त्याग तपस्या में मम् गुरुवर, सतयुग जैसे साधक है।
जिनका यश चारित्र ज्ञान का, फैल रहा है अपरंपार।
ऐसे विद्यार्जव गुरुवर का, हर्षित हो करते जयकार॥

आचार्यभगवंत के चरणों में नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु

11/04/2024
चैत्र शुक्ला तृतीया

जैसा आदि, वैसा अंत : श्री अन्तादि शतक

-इंजी. बहिन ऋषिका जैन, दमोह
(B.E, M.A, Phd. संलग्न)

अंतादि अर्थात् अन्त+आदि। पद्य में जो शब्द अन्त में होता है वही शब्द अगले पद्य में प्रारंभ में प्रयोग होता है। ऐसा पद्यों का समावेश इस अन्तादि शतक में किया गया है।

आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित प्रथमाचार्य आचार्य गुरुदेव श्री 108 आर्जवसागरजी महाराज की लेखनी के माध्यम से रचित यह कृति 'अन्तादि शतक' बड़ी ही रोचक है। यह अन्तादि शतक एक ऐसी रचना है जो अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलती। इस कृति की मुख्य विशेषता तो यह है कि इसमें प्रयोग होने वाले शब्द अनुभव परक शब्द है; जिन्हें गुरुदेव ने पद्यों में संजोकर दर्शित किया है। इस शतक में प्रत्येक पद्य में, अंत का जो अक्षर (शब्द) है उसी शब्द से अगले पद्य का प्रारंभ किया गया है।

सिद्धांत आगम के पारगामी संत, प्रवचन प्रभावक, कुशल काव्य शिल्पी, प्रभु महावीर के प्रतिबिंब, आध्यात्मिक संत, धर्म प्रभावक आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागरजी महाराज के दर्शन कर; सम्प्रदाय मुक्त भक्त हो या दर्शक, पाठक हो या विचारक, आबाल-वृद्ध नर-नारी उनके बहुमुखी चुम्बकीय व्यक्तित्व-कृतित्व को आदर्श मानकर उनकी शिक्षाओं को अपने जीवन में उतार कर अपने आपको धन्य मानते हैं।

ज्ञान-ध्यान-तप के यज्ञ में आपने स्वयं को ऐसा आहूत किया कि आप अल्पकाल में ही हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, तमिल, कन्नड़, मराठी भाषा के ज्ञानी हो गये। आपने राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रेरणादायक, युगप्रवर्तक अनेक काव्यों का सृजन करके साहित्य जगत में चमत्कार कर भव्यों को उपहार प्रदान किया है। आपकी स्वावलम्बी, निर्मोही, समता, सरलता, सहिष्णुता की पराकाष्ठा के जीवन्त दर्शन आपकी चर्या में साक्षात् नजर आते हैं। आपकी

साधना-ज्ञान-ध्यान-चिन्तन आपकी मुनि मूरत के शिल्पी आचार्य गुरुदेव श्री विद्यासागरजी महाराज द्वारा दिये गये नाम-पद 'आर्जवसागर' के सार्थक संज्ञा के पर्याय स्वरूप है। आपके दर्शन कर भव्य जीव को सहजता, सरलता की साक्षात् मूर्ति के दर्शन स्वमेव हो जाते हैं।

गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज ने 'श्री अन्तादि शतक' के अंतर्गत सर्वप्रथम पञ्च परमेष्ठी को मंगल स्वरूप मानकर मंगलाचरण किया है। इसके बाद मंगल का फल क्या है? उसे भी पद्य के माध्यम से समझाया है। इसी में जैनों का सदाचरण, उनकी सद्भावना, न्यायप्रियता, आदि की भी व्याख्या पद्य रूप में है। गुरुदेव ने इसी शतक में सम्यग्दर्शन की महिमा, मोक्ष में अनंत सुख, त्रिलोकी पूज्य सिद्धात्मा, आत्म स्वरूप, जीव-पुद्गल में भेद, सुख-दुःख, पुण्य-पाप, अनेकांत, स्याद्वाद, निश्चयनय-व्यवहारनय, लक्ष्य प्राप्ति, संयम, आचार, पुरुषार्थ, नियत-अनियत, व्रत-शील आचरण, ध्यान, श्रद्धा, आदि एवं दस धर्मों का पद्य रूप विवेचन, कर्म निर्जरा, खादी-खाकी में अंतर, शुद्धात्मा का स्वरूप, सिद्धों की आराधना, मोक्ष में अलौकिक सुख, आदि का वर्णन विशेष रूप श्री अंतादि शतक में पद्य के माध्यम से संजोया है।

यह 'अंतादि शतक' कृति आचार्य भगवन्त गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा खनियांधाना में पूर्ण हुई। इस महान अनुपम कृति के कृतिकार के चरणों में अनन्तों बार नमोस्तु निवेदित कर अंत में चार पंक्तियाँ-

जग शोभित 'विद्यार्जव गुरु' हैं, भेष दिगंबर ऋषिमुनि।
यति परमेष्ठी पंचाचारी, जग हितकारी महाकवि।
धर्म प्रभावक, समताधारी, आदर्शी गुरु अनुभवि।
प्रवचनकारी, सुशीलधारी, ज्ञानी योगी महाव्रती॥

आचार्यश्री जी के चरणों में कोटिशः नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु....

12/04/2024

चैत्र शुक्ला चतुर्थी

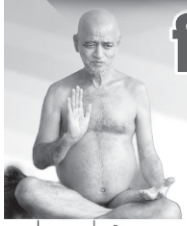

घर बैठे करें ऑनलाइन स्वाध्याय
भाव विज्ञान परीक्षा बोर्ड भोपाल द्वारा आयोजित
जिनागम प्रतियोगिता
धार्मिक पाठशाला
के माध्यम से ऑनलाइन क्लासेस से जुड़ने के लिए जिनागम ग्रुप
(आर्जव वाणी community ग्रुप) से जुड़े
अथवा नीचे दिए गए नंबर पर संपर्क करें।
online
स्वाध्याय एवं
पाठशाला
9174843674
9174843674
सिद्धांतभूषण
(विशेष) पदवी हेतु
यह कोर्स आवश्यक
है।
जिनागम प्रतियोगिता में आपको प्रतियोगिता संबंधी कोर्स की पीडीएफ भेज दी जाती है। एवं आचार्यश्री द्वारा ली गई कक्षाओं की लिंक भी आपको भेज दी जाती है, फिर इसी पीडीएफ के माध्यम से आपका google form में ऑनलाइन पेपर होता है।
संपूर्ण जानकारी के लिए आपको जिनागम ग्रुप में जानकारी मिलेगी।
धार्मिक पाठशाला
online classes
9174843674
aarjav vani
प्रतियोगिता में भाग लेने वाले सभी प्रतियोगियों को भाव विज्ञान परीक्षा बोर्ड द्वारा
;ऑनलाइन सर्टिफिकेट उनके मोबाइल पर भेजा जाता है।
एवं प्रथम,द्वितीय, तृतीय स्थान प्राप्त विजेताओं का चयन ड्रॉ सिस्टम के माध्यम से किया
जाता है; तीनों विजेताओं को सर्टिफिकेट के साथ पुरस्कार भी पहुंचाया जाता है।
aarjavvani
अधिक जानकारी हेतु संपर्क करें... 9174843674

सन्मार्ग-प्रभावना-काव्य

-आचार्यश्री आर्जवसागर जी

विषय-वस्तु

सन्मार्ग-प्रभावना-काव्य

आचार्यश्री आर्जवसागर जी

- वर्षायोग स्थापना
- गुरु पूर्णिमा
- वीर शासन जयंती
- मोक्ष सप्तमी
- सत्तर भावनाएँ
- ध्यान के भेद प्रभेद
- ध्यान संगोष्ठी
- रक्षाबंधन पर्व महिमा
- तिथियों का महत्व
- सप्त परम स्थान
- अष्ट प्रवचन मातृकाएँ
- अष्ट शुद्धियाँ
- षोडशकारण पर्व महिमा
- षोडश भावनायें
- आ.शांतिसागर समाधि दिवस
- दशलक्षण पर्व महिमा
- दश धर्म
- रत्नत्रय पर्व
- क्षमावाणी पर्व
- विमानोत्सव-रथयात्रा
- शिक्षा संस्कार
- पाठशाला सम्मेलन
- संस्कार भावना
- अभिमत
- समवशरण भावना
- धन्य त्रयोदशी
- पिच्छिका परिवर्तन
- अष्टाह्निका पर्व
- सिद्धचक्र महिमा
- प्रथम तीर्थ भावना
- ऋषभदेव वैभव
- ऋषभदेव कल्याणक तिथिया
- महावीर जयंती महोत्सव
- श्रुत पंचमी पर्व महोत्सव
- शास्त्राध्ययन महिमा
- साधु साधना-सावधानी
- भव्य साधु सेवा फल
- धर्म परिरक्षण-भावना
- धर्म पालन का फल
- भक्ति भावना
- स्तोत्र, भक्ति के अतिशय
- भक्ति का फल
- तीर्थ भावना
- पञ्च महातीर्थ वंदन
- सिद्धक्षेत्र अतिशयक्षेत्र वंदन

सन्मार्ग-प्रभावना-काव्य

-आचार्यश्री आर्जवसागर जी

मंगलाचरण

तीर्थंकर जिन सन्मति प्रभु को करूँ भक्ति सह नम्र-प्रणाम।
जिनके नाम मात्र से होते,-पूर्ण भविक के सब शुभ काम॥
सब जग के कल्याण हेतु मैं, जिनवर गीता गाता हूँ।
लिख सन्मार्ग-प्रभावना यह,-काव्य स्व धर्म बढ़ाता हूँ॥ 1॥

देव-शास्त्र-गुरु

वीतराग सर्वज्ञ हितैषी, जिनवर-वाणी कल्याणी।
दर्पणवत् झलकें सब जग के, -पदार्थ जहँ, केवलज्ञानी॥
दिव्यध्वनि से अनेकान्त-मय, ग्रन्थ रचाते गणधर जो।
पढ़ें, विनय, श्रद्धा-युत धर्मी, महा पुण्य के भागी वो॥ 2॥

★★★

जन्म जरा की व्याधि हरे जो, अन्तरंग निर्मल बनता।
ऐसा आगम तत्त्व बताये, मोक्ष-मार्ग का सुख मिलता॥
ज्ञान-ध्यान-तप लीन श्रमण वे, रत्नत्रय का कोष भरें।
सब संकट से पार लगावें, भविजन जिनको शीश धरें॥ 3॥

वर्षायोग का महत्त्व

वर्षायोग का योग रहा शुभ, धर्मामृत की वर्षा हो।
ऐसा कोई दिन न जाता, जिस दिन कोई हर्ष न हो॥
गुरु-पूर्णिमा, होय जयन्ती, प्रभो आपके शासन की।
पार्श्व, श्रेयान व वासुपूज्य जय, मोक्ष तीर्थ-जिन पावन की॥4॥

वीर शासन जयन्ती

वीर-प्रभो की वाणी से वह, बनी जयन्ती पावन है।
छ्यासठ दिन में शासन का शुभ, हुआ परम वह उद्‌गम है॥
गणधर बिन न वाणी खिरती, न भवियों को मार्ग मिले।
मार्ग बिना मंजिल न मिलती, साधन बिन न साध्य मिले॥ 5॥

★★★

सूर्य उदित हो, विकसित होता,-वन कमलों का, कमल खिलें।
भव्य-जनों को मोक्ष-मार्ग का, लाभ मिले तब तीर्थ मिले॥
तीरथ से सब तिर जाते हैं, भव संकट मिट जाते हैं।
तीर्थंकर के श्रुत तीरथ की, जय-जयकार लगाते हैं॥ 6॥

मोक्ष-सप्तमी पर्व

पार्श्वनाथ का मोक्ष-सप्तमी-पावन पर्व बड़ा न्यारा।
श्रावण-शुक्ला रही सप्तमी, जिसका उत्सव जग प्यारा॥
गिरि सम्मेद के महा कूट उस-स्वर्ण-भद्र से शिवगामी।
पूर्ण कर्म का बन्धन तोड़ा, मुक्त हुए प्रभु शुभ-नामी॥ 7॥

★★★

आप-समा हम क्षमावान हों, उपसर्गों में समता हो।
परीषहों में विजयी होवें, अतिशय जागे क्षमता वो॥
नहीं बैर हो कभी किसी से, सबको मित्र बनावें हम।
ध्यान लगाकर-कर्म-नाश कर, मोक्षसुखी बन जायें हम॥ 8॥

आत्मतत्त्व की एक भावना

आत्म तत्त्व की एक भावना, हर जीवों में नित्य रहे।
दिखे जगत् यह स्वार्थी सारा, स्वात्म धर्म ही मित्र रहे॥
कर्त्तव्यों में वास रहे नित, नहीं प्रमादी वेश रहे।
शाश्वत सुख को पावें हम सब, नहीं दुःखों का लेश रहे॥ 9॥

संवेग और वैराग्य रूप दो भावनाएँ

जगत् दुःखों को देखे भवि तो, संवेगी बन जाता है।
शारीरिक जब स्वभाव देखे, वैरागी पन भाता है॥
संवेगी, वैरागी बन भवि, मोक्ष-मार्ग अपनाता है।
मोक्ष पथिक बन ध्यान करे जब, कर्म हरे शिव पाता है॥ 10॥

रत्नत्रय मय तीन भावनाएँ

सम्यग्दर्शन प्राण हमारा, सद्गति-सुख का दाता है।
सम्यग्ज्ञान है धर्म हमारा, मन निर्मलता पाता है॥
सम्क्चारित शरण हमारा, सदा आचरण सिखलाता।
ध्यान, कर्मक्षय, मोक्षप्रदाता, भविक भावना शुभ भाता॥ 11॥

मैत्री प्रमोद आदि चार भावनाएँ

सब जीवों में मैत्री भाव हो, गुणियों में शुभ प्रेम रहे।
दुःखी जनों में कृपा भाव हो, दुर्जन में माध्यस्थ रहे॥
यही भावना सदा रहे मम, नहीं किसी में खेद रहे।
सुखी रहें सब जीव सदा ही, नहीं किसी में भेद रहे॥ 12॥

शास्त्राभ्यास जिन स्तुति आदि सात भावनाएँ

शास्त्रों का हो सुखद पठन वा, जिनवर चरणों की पूजा।
सर्व आर्य-जनों की संगति, गुणियों के गुण की पूजा॥
दोष सभी के ढांके भवि-जन, प्रिय-हित वचनों का वादन।
तथा आत्म के सदा धर्म की, रखें हि प्रतिदिन शुभभावन॥ 13॥

अनित्यादि बारह भावनाएँ

क्षणिक रहीं पयार्यों से जग,- अनित्य मय कहलाता है।
मरण समय में रक्षा न हो, अशरण, जग यह गाता है॥
चारों गति में भ्रमण रहा यह,- अनुप्रेक्षा संसार अहो!
जीव अकेला विधि फल भोगे, जड़ निज न, अन्यत्व कहो॥ 14॥

अशुचिता-मयी देह सदा यह, मिथ्यात्वादि आस्रव द्वार।
व्रत संयम से रुकें कर्म जब, संवर हो कर्मों का भार॥
तप करने से कर्म-निर्जरा,- हो, त्रिलोक-मय पूर्ण जहान।
रत्नत्रय-मय बोधि-दुर्लभ, दया-धर्म दे मोक्ष महान॥ 15॥

ध्यान के प्रकार- चार आर्त्तध्यान

इष्ट-वियोग-विजय

इष्ट वस्तु का वियोग होता, वहाँ विकलता आती है।
जब तब ना हो इष्ट समागम, आकुलता बढ़ जाती है॥
जहाँ वस्तु का आना-जाना, सदा लगा ही रहता है।
समता रखता धर्मात्मा वह, कर्मज फल को सहता है॥ 16॥

अनिष्ट-संयोग-विजय

अनिष्ट वस्तु का योग मिले जब, दुःख रूप हो गर परिणाम।
अनिष्ट रूप संयोग नाम है, अशुभ-आर्त्त है ऐसा ध्यान॥
पूर्व-कर्म के योग काल में, दुःख-साधन संयोग मिलें।
जीते धर्मी समता रखता, शीघ्र दुःख-क्षय, मोक्ष मिले॥ 17॥

पीड़ा चिन्तवन-विजय

शरीरादि में कष्ट होय तब, मानस् खिन्न है हो जाता।
पीड़ा चिन्तवन ध्यान तभी हो, अशुभ बन्ध भी हो जाता॥
तन नश्वर है, आत्म अमर है, ऐसा चिन्तवन जब आता।
पीड़ा चिन्तवन विजयी बनकर, आत्म ध्यान में रम जाता॥

निदान-विजय

पल-पल में मन विषय भोग के, चिन्तवन में है जब जाता।
भोगों में जा चित्त-ध्यान वह, निदान आर्त्त हि कहलाता॥
पूर्व पुण्य से स्वतः वस्तु का- लाभ मिले न चाह रहे।
निदान आर्त्त ध्यान को जीतो, सदा मोक्ष की राह रहे॥ 19॥

प्रशस्त-निदान (छह तरह की सम्यक् याचनाएँ)

भोग-सम्पदा नहीं चाहिए, दुःखों का क्षय मैं चाहूँ।
कर्मों का क्षय सदा हो प्रभुवर, बोधि-लाभ सदा चाहूँ॥
सुगतिगमन हो जिनवर मेरा, मरण-समाधि मैं चाहूँ।
जिनगुण सम्पत् मुझे मिले बस, केवल बोधि, मोक्ष चाहूँ॥ 20॥

चार रौद्र-ध्यान

हिंसानन्द-विजय

हिंसा में आनन्द मानना, रौद्र ध्यान कहलाता है।
क्रूर रहे आशय इससे मन,- हटे, धर्म-सुख लाता है॥
त्रस, थावर की हिंसा को तज, संयम-भय शुभ भाव रहे।
हिंसानन्द ध्यान वह छूटे, धर्म अहिंसा प्राप्त करे॥ 21॥

★★★

त्रस, थावर की हिंसा तजकर, धर्म अहिंसा पालन हो।
मन, वच, तन से किसी जीव को, कष्ट मिले वह चाल न हो॥
जैन-धर्म के मूल रहे उस, -दया-धर्म से पूर्ण बनें।
हिंसानन्दी ध्यान छोड़कर, धर्म-ध्यान सम्पूर्ण बनें॥ 22॥

★★★

धर्म अहिंसा पालन हो जब, हिंसानन्द हि कहाँ रहे।
जीवों का जो रक्षण करते, करुणा भाव ही सदा रहे॥
चलते-फिरते, खाते-पीते, विवेक जागृत नित्य रहे।
नहीं प्रमादी होती आतम, क्षमा-भाव ही मित्र रहे॥ 23॥

मृषानन्द-विजय

झूठा न व्यवहार रहे नित, मन वच तन निर्मल रहता।
मृषानन्द उस रौद्र ध्यान से,- दूर मनस् परिमल रहता॥
न्याय-नीति-मय जीवन सुन्दर, नित विश्वास बढ़ाता है।
नहीं पाप में, मात्र धर्म में, हर्षित हो सुख दाता है॥ 24॥

चौर्यानन्द-विजय

छल-कपटी या चौर्य मनस् जब, जीवन विकृत करता है।
चौर्यानन्दी रौद्र ध्यान से, हर-भव दुःख-मय होता है॥
पर-वस्तु में नियत स्वच्छ हो, नहीं लालसा रहे कभी।
अचौर्य भाव से तन्मय होकर, निर्भयता से रहें सभी॥ 25॥

परिग्रहानन्द-विजय

सदा परिग्रहों की आशा में, लीन रहे यह मन जानो।
भोगों के ही संरक्षण में, रौद्र ध्यान होता मानो॥
नहीं परिग्रह की आशा जब, मन पवित्र है हो जाता।
चिंताओं का भार दूर हो, जीवन शांति-मय भाता॥ 26॥

चार धर्म ध्यान

आज्ञा-विचय

जिन भव्यों को जिन भगवन् की, आज्ञा सदा हि भाती है।
उन भव्यों को तत्त्व द्रव्य मय, वाणी सदा सुहाती है॥
रत्नत्रय-मय मोक्ष-मार्ग को, धर्मात्मा है अपनाता।
व्रत संयम से आगे बढ़ता, अर्हतादि-प्रभु पद पाता॥ 27॥

अपाय-विचय

पाँच तरह के मिथ्यात्वों वा, पाँच पाप से दूर रहे।
धर्म सुरक्षित करने ऐसा, अपाय विचय सु-ध्यान करे॥
नित मिथ्यात्व हि दुर्गतियों में, भटकाता दुःख है देता।
पंच पाप से निंदा होती, तज इनको भवि दुःख जेता॥ 28॥

विपाक-विचय

कर्मों का फल मिलता अपने,- कार्यों के अनुरूप सदा।
बिना कर्म के भविक किसी को, कुछ न मिलता भूल कदा॥
किन कर्मों का क्या फल मिलता, ऐसा विपाक-ध्यान करो।
अशुभ कर्म से सदा दूर हो, शुभकर्मों को सदा करो॥ 29॥

संस्थान-विचय

तीन-लोक का चिंतवन जिसमें, निज परिणामों का हो ध्यान।
पिण्डस्थादि ध्यान कहे जो, पंच-धारणा जिसमें जान॥
ऐसा चिंतवन मुनिवर करते, आत्म-लीनता पाते हैं।
वे संयमी संस्थान विचय से, एक चित्त हो जाते हैं॥ 30॥

पदस्थ-ध्यान

णमोकार के पद हैं उत्तम, जिसका भविजन ध्यान करो।
पाप नशाते, पुण्य खजाना,- भरते, नम लो शीश धरो॥
अञ्जन जैसा बना निरञ्जन, सीता और सुदर्शन वे।
भविक अगणित भव से तिर गये, जिन्हें मिला जिनदर्शन ये॥ 31॥

पिंडस्थ-ध्यान

करें ध्यान पिण्डस्थ मुनीश्वर, आत्म ध्यान में हों लवलीन।
गिरि विराजें, अग्नि धारणा,-करते कर्मों को वे क्षीण॥
जलें कर्म, फिर राख उड़ाये-वायु धारणा तब होती।
नीर धारणा स्वच्छ स्थल कर, तत्त्व-धारणा गुण जोति॥ 32॥

रूपस्थ और रूपातीत ध्यान

चिद्रूपी है मम आतम यह, दर्श ज्ञान मय करें विचार।
ध्यान रहा रूपस्थ महा ये, मोक्ष-मार्ग में है स्वीकार॥
त्रिकाल-शुद्ध निष्कलंकात्मा, सिद्ध-समा जिसमें जाना।
रहा वही शुभ ध्यान परम है, रूपातीत उसे माना॥ 33॥

शुक्लध्यान

धुले वस्त्र-सम स्वच्छ व उज्ज्वल, शुचि-निर्मल गुण से परिपूर्ण।
परिमल ऐसा शुद्धात्मा का, शुक्ल-ध्यान होता सम्पूर्ण॥
ऐसी आत्म-विशुद्धि जिसमें, शुक्लध्यान-मय ऐसा जीव।
कर्म-निर्जरा करे, केवली-, बने, मोक्ष को पाता जीव॥ 34॥

ध्यान-संगोष्ठी में प्रयुक्त पद्य

नियम व यम संयम से ध्यानी, धर्म, शुक्ल वे ध्यान करें।
केवलज्ञानी योगायोगी, बनकर सम-सुख प्राप्त करें॥
ज्ञानी, ध्यानी की संगोष्ठी, संयम, ज्ञान बढ़ाती है।
मोक्षमार्ग में व्रत चारित से, शिव-सोपान चढ़ाती है॥ 35॥

★★★

श्रीफल जैसे अन्तरंग में, धवल स्वच्छ-मय है भाता।
वैसे ही वह परमध्यान है, महा-विशुद्धि मन लाता॥
जिसको पाकर बने केवली, सर्व-कर्म हैं क्षय करते।
एक समय में लोक-शिखर पर, -जाकर सिद्धालय बसते॥ 36॥

रक्षा-बंधन-पर्व

रक्षा बन्धन पर ध्याते हैं, सप्त शतक उन मुनियों को।
विष्णु अकम्पनाचार्य मुनीश्वर, ध्यावें नित उन गुणियों को॥
महोपसर्ग सहा मुनियों ने, अद्‌भुत अतिशय को पाया।
विष्णुकुमार मुनीश्वर का शुभ, देवों ने प्रिय गुण गया॥ 37॥

★★★

इस उत्सव में महानन्द ने, सबका हृदय हि भर डाला।
प्रभु श्रेयांश की मोक्ष तिथि पर, अर्हत् भक्तिमय कर डाला॥
भक्ति का इस भू पर मानो, सागर शुभ लहराया है।
जिसने रक्षा भावन भाई, सच्चे सुख को पाया है॥ 38॥

महापुरुषों की संगत से तिथियाँ आदरणीय

महापुरुष की संगत से या, नेक कार्य के करने से।
तिथियाँ पूज्य कहाती जग में, धर्म-मार्ग पर चलने से॥
तीज व तेरस मुहूर्त्त अच्छा, भविक मानते शुभकारी।
पंचम, सप्तम, ग्यारस के सम, और पूर्णिमा गुणकारी॥ 39॥

रक्षा सुपूर्ण करे पूर्णिमा, पूर्ण गुणों से भर देती।
सभी कार्य निर्विघ्न करे जो, मंगल सुखमय कर देती॥
पूर्ण चन्द्रसम उज्ज्वल होकर, जगत्-प्रकाशित कर देना।
कहती पूर्ण-चन्द्र की कान्ति, निज में प्रकाश भर लेना॥ 40॥

★★★

एकम इक ही लक्ष्य बनाये, दयामयी जग एक करे।
एक ल्क्ष्य से नहीं डिगें जन, अनेक मंगल नेक भरे॥
द्वितीया में द्विचक्षु मयी वह, अनेकान्त के नेत्र रहें।
अंक दो बहु काज बनाये, साथ बने, सब मित्र कहें॥ 41॥

★★★

रत्नत्रय-गुण कारज तृतीया, त्रिभुवन पूज्य बनाती है।
सदा चतुर्थी चार गति के, दुःख को पूर्ण मिटाती है॥
चउ अनुयोगी ज्ञान बढ़ा शुभ, ज्ञानी हमें बनाती है।
कही पंचमी पांच व्रतों से, पंचम गति ले जाती है॥ 42॥

★★★

षष्ठी षट्-कर्मों से जोड़े, षट् आवश्यक पूर्ण जहाँ।
पालें कर्म-निर्जरा करते, सौख्य मिले सम्पूर्ण वहाँ॥
जहाँ सप्तमी सप्त परम उन,- स्थानों को देती है।
पुण्य खजाना भरे सदा ही, सर्व दुःख हर लेती है॥ 43॥

सप्त परम-स्थान

सप्त परम शुभ स्थानों में, सज्जाति, सद्गृहस्थ पना।
पारिव्राज्य व सुरेन्द्रता फिर, चक्री का साम्राज्य-पना॥
अर्हत्-पद, निर्वाण सप्त ये, पुण्यात्मा भवि पाते हैं।
पुरुषार्थी वे भव-सुख से फिर, शिव-सुख में रम जाते हैं॥ 44॥

अष्टम तिथि जो अष्ट गुणों से, पूर्ण भरे शुभ सुखी करे।
अष्ट कर्म भवि क्षय कर अंतिम,- अष्टम-भू की शान्ति वरे॥
अष्ट-मातृका अष्ट-शुद्धियाँ, आतम को निर्मल करती।
अध्यात्मिक-अवतरणी जीवन,- दिला हि भव सार्थक करती॥45॥

अष्ट-प्रवचन मातृकाएँ

पञ्च समितियाँ तीन गुप्तियाँ, अष्ट सुप्रवचन माता हैं।
माता सदृश रक्षा करती, पुण्य देय सुख दाता है॥
कर्मों का संवर होता वा, जहाँ निर्जरा हो, जानो।
द्वि, त्रि भव या सप्त, अष्ट भव,- में शिव मिलता है मानो॥46॥

अष्ट शुद्धियाँ

अष्ट-शुद्धियाँ मन-वच-तन वा, भिक्षा, ईर्यापथ शुद्धि।
कही प्रतिष्ठापन शयनाशन, और विनय की जहँ शुद्धि॥
इन्हीं शुद्धियों से मुनिवर की, आत्म शुद्धि निश्चित मानो।
यही विशुद्धि भव-बंधन से-मुक्त करें जिन-मत जानो॥47॥

★★★

नौवी तिथि अक्षय संख्या है, अक्षय सुख-मय मिलते राम।
सर्व कर्म-क्षय मयी मोक्ष है, जहाँ मिले नित निज-आराम॥
नव-कोटि-सह पाप तजे जो, देवों से पूजा जाता।
नवधा-भक्ति, सेवा से भवि, तीर्थंकर-सुख भी पाता॥48॥

★★★

दसवी-तिथि है दस धर्मों की,- जननी, उपकारी जानो।
उत्तम-क्षमादि दस धर्मों वा, धर्म ध्यान सुख दे मानो॥
ग्यारस तिथि ग्यारह प्रतिमा की, शिक्षा नित ही देती है।
उपासकों को मोक्षमार्ग पर, -चला, श्रमण-पद देती है॥49॥

रही द्वादशी, द्वादश तप-मय, जीवन की शिक्षा देती।
त्याग, तपस्या, कर्म-निर्जरा,- करे आत्म शिव पा लेती॥
त्रयोदशी तिथि तेरह चारित,- दीक्षा की शिक्षा वाली।
तेरहवें शुभ गुणस्थान में- देय केवली-पद वाली॥ 50॥

★★★

चतुर्दशी तिथि चौदहवें उस,- गुणस्थान-मय कर देती।
अयोग-केवली बने आत्मा, प्रभुता को है भज लेती॥
रही अमावस , रजनी काली,- दीपावली को याद करें।
रात्रि शोभा दीप बढ़ायें, ज्ञान ज्योति शिव-सौख्य वरे॥ 51॥

षोडस कारण-पर्व-महिमा

महापर्व है षोडसकारण, भक्ति, पूजा, दान करो।
सोलह-भावन भाकर भविजन, पुण्य खजाना खूब भरो॥
इसी पुण्य से तीर्थंकर पद,- मिलता, कल्याणक होते।
करें लोक-कल्याण प्रभोजी, शिव-भागी भविजन होते॥ 52॥

दर्शन-विशुद्धि-भावना

सम्यग्दर्शन से शोभा हो, जीवन की शुभ जिन-पथ में।
वीतराग-मय देव-शास्त्र-गुरु,- की पूजा हो जिस मत में॥
पञ्च परम जिन परमेष्ठी पर, श्रद्धा दृढ़ हो जाती है।
अष्ट-अंग-सह ज्ञान चरित की,-पराग सुख उपजाती है॥ 53॥

विनय-सम्पन्नता-भावना

पूज्य पञ्च शुभ परमेष्ठी व, जैन धर्म व श्रुत में जो।
जिन प्रतिमा व चैत्यालय की, विनय करे रत सुख में वो॥
इसी विनय-सम्पन्न भाव से, मान जाय सम्मान मिले।
सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चरित-मय, मोक्षमार्ग का बाग खिले॥ 54॥

शीलव्रतेष्वनतिचार-भावना

निरतिचार हों शील-व्रतों में, जीवन यह शोभा पाता।
ध्यान शुद्ध हो, मन विशुद्ध हो, निज निर्मलता है पाता॥
शीलवान वह ऊर्ध्व-लोक में, महा प्रशंसित होता है।
स्वर्गों में जा बड़ा सुखी हो, सुर-जन अर्चित होता है॥ 55॥

अभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-भावना

सदा रहे उपयोग ज्ञान-मय, मन प्रसन्नता पूर रहे।
कर्म-फलों में सहन शीलता, समता सुख भी पूर्ण रहे॥
अभीक्ष्ण-ज्ञानी तथा साथ में, वैरागी-पन शोभित हो।
नहीं अक्ष-विषय में रमता, शिव-पद से वह लोभित हो॥ 56॥

अभीक्ष्ण-संवेग-भावना

सदा पाप से डरता है जो, संवेगी कहलाता है।
रत्नत्रय में हर्षित होता, मोक्ष-मार्ग में भाता है॥
मिथ्या-भाव व पाप सदा ही, राज्य-दण्ड दुर्गति देते।
व्यसनादिक को छोड़ भविक वे, सद्गति सुख को पा लेते॥ 57॥

शक्तितस्त्याग-भावना

पूर्ण शक्ति सह त्याग करो भवि, शक्ति बाह्य हो त्याग नहीं।
आहारौषध दान करें नित, पुण्य खजाना भरे वहीं॥
सांसारिक वे पदार्थ सारे, नहीं साथ में जाते हैं।
त्याग इन्हीं का इसी लोक में, भार रहित सुख पाते हैं॥ 58॥

शक्तितस्तप-भावना

पूर्ण तपों को तपता भवि जो, कर्म-भार घट जाता है।
कर्मों का संवर भी होता, पुण्यकोष भर जाता है॥
स्वर्गों में जाकर जो धर्मी, बड़े सुखों को पाता है।
नर हो तप से कटें कर्म सब, पूर्ण सुखी हो जाता है॥ 59॥

साधु-समाधि-भावना

मोक्षमार्ग पर चलें मोक्ष-पद,- मिले, अतः मुनि दीक्षा हो।
रत्नत्रय नित रहे सुरक्षित, अतः साधु परिरक्षा हो॥
हो विहार, आहार साधु का, सदा साथ रहें सब लोग।
महा-पुण्य से सद्गति में जा, सौख्य सदा हि पायें लोग॥60॥

वैयावृत्तकरण-भावना

वैयावृत्ति धर्मीजन की, गुण पाने भविजन करते।
सभी सुखी हों धर्म-वृद्धि हो,- पुण्य-खजाना वे भरते॥
सल्लेखन में सेवा जिनकी, अनुभव बहुत बढ़ाती है।
मोक्ष-मार्ग में रत्नत्रय से, शिव-सोपान चढ़ाती है॥ 61॥

अर्हत्-भक्ति-भावना

अरहंतों की महा भक्ति जो, अतिशय मय-शुभ पुण्य भरे।
तीर्थंकर पद देय भक्ति वह, पूर्ण विश्व को धन्य करे॥
कल्याणक वे उत्तम-वैभव, जिनमहिमा दर्शाते हैं।
श्रद्धा-भक्ति जगत् करे नित, समदर्शी बन जाते हैं॥

आचार्य-भक्ति-भावना

आचार्यों की श्रद्धा-भक्ति, सदाचार निर्मल रखती।
गुण-वृद्धि कर भव्य जनों को, शांति दिला सुख से भरती॥
पंचाचार धारते गुरुवर, दर्शन-ज्ञान, चरित, तप में।
तथा वीर्य जो आत्मिक शक्ति,- हों उत्साही,वे जिसमें॥ 63॥

बहुश्रुत-भक्ति-भावना

द्वादशांग के ज्ञानि जनों का, गुणानुवाद अभिनन्दन हो।
उनके सदृश गुणगण पाने, नित-प्रति, पद में वंदन हो॥
महापुण्य से सद्गुरुओं के प्रवचन भव्यों को मिलते।
बहुश्रुतधारी उपाध्याय से, सुमार्ग चल भवि भव तिरते॥64॥

प्रवचन-भक्ति-भावना

प्रवचन-भक्ति करें शास्त्र का,- मंगल-वंदन शुभ होता।
पुण्य बढ़े फिर सदा आत्म में, ज्ञान क्षयोपशम है होता॥
आज पठित वह ज्ञान भले ही, विस्मृत भी हो गर मानो।
अगले भव में स्मृत हो, भवि, -केवलज्ञानी हो जानो॥ 65॥

आवश्यकापरिहाणि-भावना

आवश्यक को यथाकाल में, पालें भविजन पूर्ण सदा।
नहीं प्रमादी बनकर कोई, कमी करें न भूल कदा॥
समता आदिक आवश्यक वे, उत्साहित हो पूर्ण करें।
जिनवर पूजा, गुरु सेवादिक,- करें, गुणों का कोष भरें॥ 66॥

मार्ग-प्रभावना-भावना

मोक्ष-मार्ग की प्रभावना में, जीवन अपना अर्पण हो।
सदाचरण भी पूर्ण-लोक में, सब भव्यों को दर्पण हो॥
ज्ञान, तपः वा दान साथ में, जिन-पूजा भी नित करना।
मिथ्यादर्शन-ज्ञान हरण कर, जिन-शासन से हित करना॥ 67॥

प्रवचन-वत्सल्य-भावना

प्रवचन में वत्सल हो नित ही, परोपकार के पुष्प खिलें।
अतिशयकारी पुण्यार्जित हो, सद्गतियों के सौख्य फलें॥
यही अकृत्रिम-नेह सभी को, तीर्थंकर-पद देता है।
अपनी दिव्य-ध्वनि से जग का, सर्व दुःख हर लेता है॥ 68॥

चा.च.आचार्यश्री शांतिसागर समाधि-दिवस

वर्तमान में प्रथम हुये जो, चारित चक्री कहलाये।
शान्तिसागराचार्यश्री के,- महा-गुणों को हम गायें॥
समाधि-दिवस को सभी मनायें, उनके उत्तम गुण पायें।
उन जैसे दृढ़-चारित, तप अरु,- समाधि-सुख में रम जायें॥ 69॥

दस-लक्षण-पर्व-महिमा

दशलक्षण है महापर्व ये, मन में खुशियाँ भरता है।
त्याग, तपों से आत्म-शुद्ध कर, जीवन सुखमय करता है॥
तीर्थंकर के धर्म-मार्ग की, प्रभावना नित होती है।
गुरु-सेवा, गुरुओं की वाणी, पाप-कर्म को धोती है॥ 70॥

उत्तम-क्षमा-धर्म

क्रोध जीतकर क्षमा-भाव से, उत्तम धर्मों का पालन।
जिसके जीवन में होता है, पापों का सब प्रक्षालन॥
भव्य बन्धुओ! ऐसे क्षण ये, महा-पुण्य से मिलते हैं।
महा-पुण्य से भरे भविक-गण, धर्म गुणों से सजते हैं॥ 71॥

उत्तम-मार्दव-धर्म

मान-गलन से धर्मी मानव, मार्दव-धर्मी बन जाता।
विनीत-गुण सह लोक जनों के-बीच प्रशंसा नित पाता॥
पात-झुके जब नीर सतह पर, जल से पूरित हो जाता।
कुछ त्यागे तब सब कुछ मिलता, धर्म-गुणों से भर जाता॥ 72॥

उत्तम-आर्जव-धर्म

धर्म-आर्जव पाता उत्तम, सहज, सरल जो होता है।
माया-छल का त्याग हृदय से, पूर्ण जहाँ पर होता है॥
देश, समाज वा प्रियजनों में, जो निश्छल व्यवहार करे।
वही धर्म की रक्षा करता, पूज्य बने भव-पार करे॥ 73॥

उत्तम-शौच-धर्म

मन, वच, तन की शुचिता को ही, शौच-धर्म माना जाता।
ग्लानि छोड़ो, तजो लोभ अरु,-पर-पदार्थ जिनसे नाता॥
आशा, तृष्णा अग्नि-कुण्ड-सम, नहीं भरे वह ईंधन से।
छोड़े ममता जग विषयों से, हो संतोषी सम-धन से॥ 74॥

उत्तम-सत्य-धर्म

जो विश्वास बढ़ाता उत्तम, सत्यधर्म कहा जाता।
इसी धर्म में सच्चा सुख है, विजय-पतका फहराता॥
सज्जन लोगों से यतिवर वे, हितकारी शुभवचन कहें।
न्याय-नीति से चलें भविक सब, शिव-पथ से शिव सौख्य लहें॥ 75॥

★★★

सज्जन-जन के बीच सुशोभित, होते मुनिवर जग न्यारे।
हितकारक वाणी से बोलें, प्रिय-वचन सब दुःख हारे॥
सत्य धर्म से जगत् प्रशंसित, होते भविजन जग प्यारे।
सत्य वचन से श्रद्धा कारक, बने कार्य सब शुभ सारे॥ 76॥

उत्तम-संयम-धर्म

महामुनीश्वर सब जीवों पर, करुणा-मय शुभ-भाव धरें।
त्रस, थावर हिंसा से विरहित, राग-द्वेष परिहार करें।
सर्व प्रशंसित आवश्यक वे, संयमित होकर नित्य करें।
बिना प्रयोजन क्रिया नहीं हो, शुभ ध्यानों में चित्त धरें॥ 77॥

उत्तम-तप धर्म

सदा मोक्ष का लक्ष्य बनाकर, बारह-तप जो तपता है।
कर्मों का संवर कर उत्तम, कर्म-निर्जरा करता है॥
उपवासादिक महा-तपों को,-तपे महा-भाग कहिये।
लोक प्रशंसित ऐसा भवि वह, पुण्यात्मा-सम सब रहिये॥ 78॥

उत्तम-त्याग-धर्म

अल्प-त्याग भी स्वर्गिक सुख को, देता भविजन पहचानो।
निर्भय होकर व्रत, संयम को, धारो होय सुगति जानो॥
कर्म-निर्जरा-संख्य गुणित हो, आत्म विशुद्धि जब होती।
बढ़े ध्यान सम्यक् वह यति का, विधि अञ्जन को जो धोती॥ 79॥

उत्तम-आकिञ्चन्य-धर्म

आकिञ्चन्य महान-धर्म है, इसमें किञ्चित संग नहीं।
नहीं मोह वा विषय-वासना, जन-मन-रञ्जन रंग नहीं॥
एक मात्र यह आत्म हमारी, ज्ञान-दर्श-मय पूर्ण यहाँ।
ध्यानी बनकर आत्मसिद्ध कर, शिव पायें सम्पूर्ण जहाँ॥ 80॥

उत्तम-ब्रह्मचर्य-धर्म

सप्त-व्यसन का त्याग करे फिर, ब्रह्मचर्य-व्रत लेता जो।
पर-स्त्री को माता, भगिनी, पुत्री-सम ही समझे वो॥
महिला भी वह पर पुरुषों को, पिता, पुत्र, सुत-सम माने।
कहा ब्रह्मचर्य व्रत धारी, आगम ऐसा शुभ जाने॥ 81॥

रत्नत्रय-व्रत-पर्व

रत्नत्रय का पर्व मनाने, रत्नत्रय-व्रत आप धरें।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान व्रतों से, मोक्षमार्ग सुख प्राप्त करें॥
लौकिक-रत्न भले मौलिक हैं, नश्वर वे कहलाते हैं।
अमूल्य, अलौकिक रत्नत्रय वे, आत्मिक मोक्ष दिलाते हैं॥ 82॥

क्षमा-वाणी-पर्व-भावना

सभी हृदय में पूर्ण रूप से, क्षमा-भाव यह नित्य रखें।
सभी हृदय में कभी भूल से, बैर भाव वह नहीं रखें॥
घड़ी-मात्र में ज्ञानी जन वे, क्रोध शमन कर लेते हैं।
अज्ञानी वे राग-द्वेष से, बैर सदा रख लेते हैं॥ 83॥

★★★

क्रोध खटाई-सम होता है, बैर अचार कहा जाता।
धर्मी मानव क्रोध करे न, क्षमा-भाव मन में लाता॥
कितनी भी बाधायें आवें, समता रख प्रभु को ध्याता।
ऐसा मानव सरल स्वभावी, स्वर्ग सुखी हो, शिव पाता॥ 84॥

सदा क्षमा ही भाव रहे नित, नहीं बैर मन में रखना।
ना बदले का भाव रहे वह, सब हितकर मानस् रखना॥
क्षमा मांगना सरल समझलो, करना क्षमा वीर का रूप।
क्षमा याचना के पहले हम, करें क्षमा, वह धर्म स्वरूप॥ 85॥

★★★

क्षमा; वीर का आभूषण है, आत्म सु-शोभा है बढ़ती।
बैरी भी वे मित्र बनें सब, आत्मीयता है बढ़ती॥
सुख-दुःख में भी हिल-मिल रहते, नहीं कपट न छल होता।
धर्म-प्रभावना, बढ़े भावना, मोक्षमार्ग परिमल होता॥ 86॥

विमानोत्सव-रथयात्रा

नगर विमानोत्सव जिनवर का, बड़ी उमंगें शुभ लाया।
जन-जन में हो प्रभु-गुणगायन, महानन्द दिल में छाया॥
जय-जय की ध्वनि से गुंजित हो, जग में खुशियाँ भर लाया।
धर्म-दीपकों से हर घर का, आंगन ज्योतिर्मय भाया॥ 87॥

★★★

गाजे-बाजे रजत-पालकी, रजत-मयी जिनरथ आया।
नाचें, गायें युवा साथ में, साधु-संघ भी जँह पाया॥
धर्म-ध्वजायें केशरिया हैं, स्वर्णिम नीर कलश भाया।
चमर, छत्र सिंहासन प्यारे, भव्यों का मन हर्षाया॥ 88॥

★★★

शान्तिनाथ है अतिशयकारी, कुन्थुनाथ जी मन हरते।
अरहनाथ-जिन कर्म-हरें वे चौबीसों प्रभु गुण भरते॥
बीस तीर्थ-कर शिव को दें वा, सिद्ध अनन्तों सुख देते।
नव-देवों को नित-प्रति नमते, निज सम हमको कर लेते॥ 89॥

यही विमानोत्सव वैमानिक,-स्वर्ग-लोक में ले जाता।
अगले भव में तीर्थंकर के, समवसरण का सुख पाता॥
जग-उद्धारक, जग-कल्याणक वाणी से भविजन सजते।
जैन-धर्म के उत्तम-पथ से, भव-समुद्र भविजन तरते॥ 90॥

शिक्षा-संस्कार

शिक्षा है आधार-शिला यह, उन्नति शिखरों की जानो।
धर्म रहे संस्कार मणि-सम, -सदाचार का शुभ मानो॥
सदाचार वा सद्विचार ये, सबको स्वर्ग दिलाते हैं।
मोक्ष-मार्ग पर चला हमें फिर, शिव का सौख्य जगाते हैं॥ 91॥

पाठशाला-सम्मेलन

संस्कारों से संस्कृति रक्षा,-होती सुख से भर देती।
जैन-धर्म यह रहे सुरक्षित, पावन होती फिर धरती॥
जहाँ साधुओं का विहार हो, शुभ आते हैं तभी विचार।
चलें पाठशालाएँ जिनसे, भरता रग-रग में संस्कार॥ 92॥

★★★

मात-पिता, गुरु जिन वचनों से, भविजन अनुभव बढ़ जाते।
पूज्य, बड़ों की सेवा से सब, उत्तम गुण उनके पाते॥
संयम जब जीवन में आता, लोक-पूज्यता भवि पाते।
धर्म-क्रियायें पुण्य भरे तव,-सद्गति सुख जीवन पाते॥ 93॥

संस्कार-भावना

दीक्षा ले यह महा पुण्य है, या हों श्रावक भाग्य रहा।
धर्म संतति चले भाव बस, यही परम सौभाग्य रहा॥
संतानें गर मोक्षमार्ग में, जायेंगी रथ धर्म चले।
अथवा जैनी-पन पालन हो, कर्तव्यों में आत्म ढले॥ 94॥

गर्भकाल में भोज्य शुद्ध जब, धार्मिक होते शुद्ध होते विचार।
जिन-दर्शन पूजन सु-पाठ हो, जपे मंत्र माता नवकार॥
मेरी संतति मुनि, आर्यिका-बने मात सुविचार करे।
होनहार हो सद् विचार हों, -पुत्र, जगत् उपकार करे॥ 95॥

★★★

मम सुत जन्मा मंत्र सुनाती, माँ सहलाती उर में देख।
बड़ा होय तब साधु बनेगा, तीर्थंकर सम इसकी रेख।
ऐसा लगता नाम करेगा, जग में कुल का भारी यह।
जिनवर पूजा कर,- मुनि सेवा, महा पुण्य का भागी यह॥ 96॥

★★★

मेरी संतति मातृभूमि में, संस्कारों को पायेगी।
माँ की आज्ञा शिरोधार्य कर, पिता कुलीन कहायेगी॥
उत्तम कृषि, मध्यम व्यापारी-, बने, दान में आगे हो।
नहीं नौकरी कर, नौकर हो, गांव छोड़ न भागे वो॥ 97॥

★★★

मात-पिता की नजरों में रह, शुद्ध भोज्य व जल होगा।
जल गालन, दिन में भोजन कर, जिन कुलीन उज्ज्वल होगा॥
गृह परिजन व मात पिता की, सेवा में तत्पर होगा।
धर्म गुरु की रक्षा में सुत, कहे बिना ही रत होगा॥ 98॥

★★★

मात-पिता गर नौकर रखते, सुत रक्षा नौकर करते।
न स्नेह मिले माता का, बाह्य गमन फिर सुत करते॥
रहता न स्नेह उन्हें भी, मात-पिता व स्वजनों से।
मात्र वासना रुपया पैसा, बड़ा ही लगता स्वजनों से॥ 99॥

बाहर जा, बाहर के होते, निज घर को ही वे भूलें।
संस्कार को भी भूलें वे, व्यसनों में रत हों फूलें॥
मात-पिता गर कष्टों में हों, न परवाह उन्हें रहती।
कहें वहीं से टाटा वे तो, उनमें करुणा न पलती॥ 100॥

★★★

बच्चे कहते मुझे आपने, नौकर के कर सौंपा था।
आज मुझे भी नौकर भाते, मिला नेह न मौका था॥
बाहर आकर नाता मुझको, यही किसी से भाया है।
यही रहूँगा निश्चित, मैं तो, ऐसा मन में आया है॥ 101॥

★★★

मेरा जीवन साथी मैंने, यहीं देखकर बना लिया।
मेरे वस में पैसा अब तो, जो मैंने यह कमा लिया॥
मात-पिता से दूर ही मुझको, रहना अच्छा लगाता है।
बाहर का वह फास्ट-फूड ही, रुचिकर मुझको लगता है॥ 102॥

★★★

जैन लोग तो बहुत ही कम हैं, अजैन अच्छे लगते हैं।
भौतिकता के युग में अब तो, धर्मी फीके लगते हैं॥
जैन धर्म से आस्था उनकी, पूर्ण खत्म हो जाती है।
बीबी, टी.वी., मोबाइल-धुन, सवार जब हो जाती हैं॥ 103॥

★★★

सारे सपने मात पिता के, झूठे वे हो जाते हैं।
दुःख दर्द में या मृत्यु में, नहीं काम सुत आते हैं॥
लगता ऐसो सुत को मैंने, ना ही जन्म दिया होता।
ना सेवा ना खर्चा होता, ना ही कर्ज लिया होता॥ 104॥

क्यों मैंने ये लगन रचायी, किसके खातिर कमाई की।
किससे मैंने आस लगाई, किसके संग ही रुलाई की॥
ना कोई सुत-सुता दूर हो, अपने मात-पिता से जान।
मातृ ग्राम रह धर्म-कर्म हों, सबका गृह हो स्वर्ग समान॥ 105॥

★★★

संस्कारों का खूब हो, हर गृह में शुभ मेल।
कभी न फिर रहती वहाँ, भौतिकता की जेल॥ 106॥

★★★

भौतिकता में सुख नहीं, सुख देता है धर्म।
पूज्य-गुरु का अनुशरण, होय करो वह कर्म॥ 107॥

★★★

संस्कार का नित्य ही, पालन हो तब जान।
शुभ-गति पाकर शीघ्र ही, होगा शिव-कल्याण॥ 108॥

★★★

मात-गुरु फिर धर्म गुरु, रहें सभी के पास।
'आर्जव' बन भव पार हों, प्रभु रहे फिर पास॥ 109॥

अपना अभिमत किसको दें

अपना अभिमत उसको होगा, धर्म सुरक्षक जो होगा।
अपना सुहृद भी वह होगा, धर्म अहिंसक जो होगा॥
अपना हितकर वही रहेगा, सदाचार युत जो होगा।
अपना उद्धारक वह होगा, मोक्षमार्ग में रत होगा॥ 110॥

समवसरण-भावना

तीन लोक का अद्भुत वैभव, समवसरण जग में न्यारा।
जन-जन का कल्याण करें जो, भव्यों को अतिशय प्यारा॥
समवसरण की शरण में आकर, तीर्थंकर गुण गायें सभी।
जिनवाणी सुन मोक्ष मार्ग पा, शिव पा, भव न पायें कभी॥ 111॥

तीर्थंकर ने समवसरण का, वैभव हमको बतलाया।
दिव्यध्वनि सुन गणधर प्रभु ने, समवरण का गुण गया॥
सौधर्मेंद्र ने आज्ञा देकर, समवसरण जो रचवाया।
इंद्र कुबेर से पावन वैभव-देख लोक सब हर्षाया॥ 112॥

★★★

भव्य जीव वे समवसरण पा, निज कल्याण किया करते।
सम्यग्दर्शी बने तत्त्व पर, श्रद्धा रख सुख को वरते॥
बने विवेकी चारित गहते, मोक्ष पथिक वे कहलाते।
कर्म निर्जरा करें; धर्म से, निज चेतन को नहलाते॥ 113॥

★★★

भाग्यवान को समवसरण का, दर्शन हो यह सब जानो।
महापुण्य से दिव्यध्वनि का, लाभ मिले यह भवि जानो।
जन्म जन्म का पुरुषार्थी वह, उत्साही हो जिनधर्मी।
तीर्थंकर की शरण गहे वह, श्रद्धायुत शुभ षट्कर्मी॥ 114॥

★★★

समवसरण यह अद्भुत कृति है, लोक भविक को कल्याणी।
जग उद्धारक जिसमें खिरती, शांति प्रदायी प्रभु वाणी॥
सर्व दुःखों के हरण हेतु वे, शरण गहें जग के प्राणी।
सुख पाते हैं ज्ञान चारित पा, नर सुर हो या मुनि ध्यानी॥ 115॥

★★★

समवसरण की चौबीसी को, भाव सहित जो नमते हैं।
निकट भव्य वे अल्पकाल में, मोक्ष महासुख वरते हैं॥
चौबीसी मय समवसरण के, बिम्ब रत्नमय शोभ रहे।
कर्म नशाते, पुण्य बढ़ाते, सद्गति दे मन मोह रहे॥ 116॥

कर्म निधत्ति और निकाचित, जिन दर्शन से नश जाते।
तीर्थंकर सब प्रकृति बंध हो, दोय केवली मिल जाते॥
सभी विघ्न बाधायें टलती, सुखसागर में रम जाते।
समवशरण के दर्शन से सब, भविजन भव से तर जाते॥ 117॥

★★★

समवसरण का धूलिसाल वह, परकोटा अतिशय शोभे।
विजयादि चउ द्वारों से वह, भव्य जनों का मन मोहे॥
श्रद्धा के बिन इस परकोटे-के भीतर न मिले प्रवेश।
तीर्थंकर पर श्रद्धा जागे, मार्ग खुले वह उसे विशेष॥ 118॥

★★★

समवसरण का मानस्तंभ वह, सबका मान गला देता।
विनम्रता सह समदर्शी बन, भविक धर्म शिक्षा लेता।
जहाँ सरोवर भूमि खातिका, बाग नाट्यशालाएँ हों।
उपवन भव सह मणि वेदिका, ध्वजा भूमि गुण गायें जो॥ 119॥

★★★

कल्पवृक्ष वे मनवांछित सब, वस्तु प्रदाता शोभ रहे।
जहँ स्तूप व प्रसाद भी वे, सबके मन को मोह रहे॥
कमल दलों से सभाएँ बारह, त्रि कटनी के निकट रहीं।
मुनि नर सुरादि धर्म बढ़ाते, सद्गुण सुरभि छिटक रही॥ 120॥

★★★

धर्म चक्र मंगल मय उन, प्रातिहार्य की शोभा हो।
कमल सहस्रदली सिंहासन, ने सबका मन मोहा हो॥
शोक नाशाता अशोक तरु वह, भामंडल में भव दिखते।
छत्र चमर सह ईश्वर जग में, दिव्यध्वनि सह प्रभु लसते॥ 121॥

गणधर वाणी द्वादशांग मय, सब हितकारक होती है।
वाद्य ध्वनि से जनता सुखकर, सुकून पाय सुख जोती है॥
चहुँ दिशाओं से प्रभुवर का, दर्शन सबके पाप हरे।
वीतराग 'आर्जवमय' मूरत, समवसरण जय धन्य करे॥ 122॥

★★★

समवसरण मण्डल रचा, चौबीसी सुविधान।
समवसरण की भावना, लिख दी हो कल्याण॥ 123॥

★★★

सम्यग्दर्शन से मिले, स्वर्ग सौख्य संपूर्ण।
विदेह आदि में दर्श हो, समवसरण का पूर्ण॥ 124॥

★★★

समवसरण सब जीव का, शरण रहा यह जान।
यही शरण सुख मार्ग है, प्रभु उपदेश महान॥ 125॥

★★★

समवसरण का नित्य ही, करें भविक जो ध्यान।
भवसागर को पार कर, पाते शुभ कल्याण॥ 126॥

★★★

धन्य-त्रयोदशी (धनतेरस) दीपावली

धन्य त्रयोदशी वीर प्रभो ने, योग-निरोध किया पावन।
पावापुरी में ध्यान लगाकर, भस्म किया विधि का कानन॥
समवसरण-बहिरंग श्री को, छोड़ दिया था प्रभुवर ने।
मोक्ष-लक्ष्मी को पाया फिर, शिव-सुख पाया जिनवर ने॥ 127॥

★★★

चार प्रहर के बाद हि देखो, गणधर-प्रभु की आतम में।
शुक्ल-ध्यान से ज्ञानसु-केवल दीप जला, निज-चेतन में॥

देव-गणों ने केवल ज्योति, की श्रद्धाञ्जलि प्रभु को दी।
महा-दीपकों की ज्योति से, नभभूमि जग-मग कर दी॥ 128॥

★★★

कार्तिक कृष्णा अन्त समय में, पर्व मनाया जब जाता।
दीपावली पर वीर-मोक्ष का, दीप जलाया तब जाता॥
गणधर की वह ज्ञान-लक्ष्मी, सबके मन को भाती है।
ज्ञान, लक्ष्मी भरे हृदय में, आतम निज-सुख पाती है॥ 129॥

पिच्छिका परिवर्तन

मयूर-पंख की बनी पिच्छिका, लघु, मृदु, कोमल, सुन्दर है।
धूल, पसीना, ग्रहण करें ना, जीव बचें गुण अन्दर हैं॥
अश्विन, कार्तिक माह अन्त में, मयूर पंख झरा देता।
मानो मुनियों के कारज वह, मृदुल पंख सदा देता॥ 130॥

★★★

मयूर-पंख वे समिति क्रिया में, जीव बचाने साधन हैं।
जिसकी वस्तु लगे धर्म में, उसका जीवन पावन है॥
नहीं कदा ही मयूर को वह,-कष्ट रंच भी होता है।
वह तो नाचे महाव्रती लख, हर्ष उसे नित होता है॥ 131॥

★★★

पिच्छिका परिवर्तन कारज, लोग बहुत जहँ आते हैं।
देख उपकरण संयमी जन का, खुशियाँ खूब मनाते हैं॥
वर्ष मात्र में इक दिन देखो, यह परिवर्तन होता है।
संयम लेने वाले को यह, महा-पुण्य सुख देता है॥ 132॥

★★★

आज पिच्छिका देते जो भी, बाद पिच्छिका उन्हें मिले।
साथ कमण्डलु उन्हें मिले जब, संयम सुरभि वहाँ खिले॥

साधु संघ के इक माही भी, विहार में जो साथ चलें।
चातुर्मास कराने-सम ही, पुण्यानुबन्धि पुण्य मिले॥ 133॥

आष्टाह्निक-पर्व-महिमा

कार्तिक, फाल्गुन, अषाढ़ में शुभ, आष्टाह्निक का पर्व महा।
नन्दीश्वर के बावन मंदिर, देव पूजते नित्य जहाँ॥
नन्दीश्वर के जिनलायों के, सह पूजन जिन-बिम्बों की।
सिद्धचक्र उन सिद्धों की भी, पूजा सद्गुण-धर्मों की॥ 134॥

सिद्धचक्र-महिमा

सिद्धचक्र की आराधन हो, अनंत सुख का अभिनंदन।
अनंत गुणों की उपलब्धि हो, अनंत सिद्धों को वंदन।
एक सिद्ध के सभी प्रदेशों, में अनंत सिद्ध वसते।
मुख्य अष्ट गुणों से मण्डित, सिद्धालय में प्रभु लसते॥ 135॥

★★★

सम्यक्त्वादि अष्ट गुणों सह, अनंत शक्ति के धाम रहे।
दर्श-ज्ञान से पूर्ण विश्व को, जाने, केवलज्ञान रहे।
तीन लोक के मस्तक पर जो, शिखामणि सम कहलाते।
एक हजार आठ नाम शुभ, क्षेमंकर सबको भाते॥ 136॥

★★★

धर्मी नारी मैनासुंदरि, शुभ लक्षण जिसने पाए।
नित्य रात-दिन जिसने पति की, सेवा कर प्रभु गुण गाए।
पहुपाल ने कोड़ी के संग, विवाह जब वह रचवाया।
नहीं ग्लानि कर धर्मी के संग, सेवा भाव जिसे भाया॥ 137॥

★★★

''मैं'' ना सुंदरी कहने वाली, नहीं रूप अभिमानी थी।
कुष्ठ रोगियों के रोगों को, हरा जु सुखद कहानी थी।

मुनिवर के उपदेश मात्र से, जिसने मण्डल रचवाया।
श्रीपाल वे हुए निरोगी, भोग तजे; संयम पाया॥ 138॥

★★★

मैनासुंदरी की भक्ति ने, कर्म बंध को शिथिल किया।
सिद्धचक्र की आराधन से, रोग हरा भव सफल किया।
श्रीपाल वे संयम पालक, स्वार्थी-जग से पार हुए।
आत्मिक बल से भव समुद्र को-लांघ; सदा जयकार हुए॥ 139॥

★★★

ध्यान लगाकर कर्म शत्रुओं-, को जीता साधु बनकर।
नहीं रमे वे राज्य भोग में, न डूबे स्वादु बनकर।
अतिशय वैरागी बनकर फिर, वन में जा शुभ ध्यान किया।
पाकर केवल ज्ञान श्री फिर-मोक्ष श्री का पान किया॥ 140॥

★★★

धर्म गुणों के संस्कार से, मैना-सुंदरि पूर्ण रही।
श्रद्धा रखकर वीतराग में, भक्ति से संपूर्ण रही।
गुरु आशी-व्रत पाए, जिसका- पावन जीवन धन्य हुआ।
ऐसी उत्तम आराधन का, नहीं उदाहरण अन्य हुआ॥ 141॥

★★★

सिद्धों की अर्चा पूजा से, पाप पलायन हुआ विशेष।
नहीं रहा था पूर्व जन्म के, मुनि निंदा का कर्म जु शेष।
वीतराग की भक्ति मात्र ही, देती सुख, न रागी की।
जंगल में भी रक्षा होती, महा पुण्य के भागी की॥ 142॥

★★★

मैना-सुंदरि ख्यात जो, सिद्धचक्र के काज।
सिद्ध हुए श्रीपाल भी, श्री-पालक वे राज॥ 143॥

सिद्ध सु-चक्र विधान से, सर्व मिटें संताप।
आर्जवता से शिव मिले, दें सिद्धों का जाप॥ 144॥

षोडस-कारण-पर्व-महिमा

माघ, चैत्र व भाद्र माह में, षोडसकारण पर्व महा।
दर्शन-विशुद्धि आदिक भावन, भाते हैं वे भव्य जहाँ॥
तीर्थंकर शुभ प्रकृति बंध में, सोलह-भावन कारण हैं।
मोक्ष-महल की रहीं सु-उत्तम, पावन-पवित्र साधन हैं॥ 145॥

प्रथम तीर्थ-भावना

रत्न सु-धारा देव-लोक से, बही अयोध्या सुन्दर मान।
स्वर्णिम नगरी लोक प्रशंसित, -महल सर्वतोभद्र महान॥
चौरासी मंजिल शुभ गृह में, गर्भित हुई मरुदेवी माँ।
देव-देवियों से शोभित थीं, धर्म-ध्यान में तत्पर माँ॥ 146॥

★★★

स्वप्न भी सोलह देखे माँ ने, फल पूछा था राजन् से।
होनहार बालक लक्षण सुन, हर्ष हुआ गुण पावन से॥
शुभ मुहूर्त्त में प्रभो जन्म पर, अपार खुशियाँ छायीं थी।
देव-लोक में घण्टे बाजे, वर्षे रत्न, शहनाई थी॥ 147॥

★★★

इन्द्र ऐरावत गज पर बैठा, -कर सवार पूरा परिवार।
नगर अयोध्या में आया तब, झूम उठा था सब परिवार॥
करोड़ वाद्यों के शब्दों सह, गये मेरु पर, प्रभु राजे।
क्षीरोदधि का जल जहँ लाया, कलश ढले, प्रभुवर साजे॥ 148॥

★★★

क्षीरोदधि का उत्तम लाया, देवों ने वह जल अभिषेक।
सब इन्द्रों में प्रधान था वह, सौधर्मेन्द्र हि जहाँ विशेष॥

ईशानेन्द्र की जोड़ी के संग, प्रधान इन्द्र ने प्रभु को बीच।
पीठासन पर बिठा स्वयं फिर, स्थित हो इन्द्रों के बीच॥ 149॥

★★★

मात्र जोड़ी-सह दो इन्द्रों ने, प्रभु का न्हौन कराया था।
सर्व देव परिचारक थे वे, पुण्य-भाग्य को पाया था॥
जहाँ अप्सराओं ने प्रभु के, मंगल गायन गाये थे।
लखा अंगूठे में लाञ्छन तब, ऋषभ देव कहलाये थे॥ 150॥

★★★

शचि ने रत्न-अलंकारों से, प्रभु को खूब सजाया था।
नहीं खुशी का पार रहा तब, ताण्डव नृत्य रचाया था॥
इन्द्रों का शुभ नृत्य देखकर, चकित हुआ था पूर्ण जहान।
जिन बालक सह सुर क्रीड़ा से, बाल्य बने सब गुण की खान॥ 151॥

★★★

आये थे प्रभु देव-लोक से, रत्न झड़े, सत्कार हुआ।
जग-जीवों को एक समय में, युगपत् सुख संचार हुआ॥
रूप लोक में भाया सुन्दर, हर्ष भी अपरम्पार हुआ।
आप श्री से अगणित भव्यों, - का मंगल उद्धार हुआ॥ 152॥

★★★

गर्भ-पूर्व के छहों माह फिर, नव-मास भी अब पाये।
पंद्रह माहों तक देवों ने, सुरत्न उत्तम वर्षाये॥
चौदह कोटि जहँ रत्नो को, इस भू पर वर्षाया था।
राज्य बसे उन मानस का, रोम-रोम हर्षाया था॥
रत्न बटोरे सर्व प्रजा ने, अतिशय माला-माल हुए।
प्रभु सुख लाये, प्रभु-गुण गाये, हम सब अभी निहाल हुए॥ 153॥

आदिनाथ की स्तुति करने, सविनय गुण-गण करूँ बखान।
नाभिराय मरुदेवी नन्दन, कुलकर-कुल के दीप सुजान॥
प्रथम तीर्थ-कृत ऋषभदेव वे, भरत, बाहुबली पिता महान।
नन्दा और सुनन्दा पत्नि, इक सौ द्वि जिनकी सन्तान॥ 154॥

★★★

नन्दा के सुत भरतादि सौ, ब्राह्मी एक सुता पहचान।
और सुनन्दा पत्नी के वे, थे बाहुबली पुत्र महान॥
तथा सुन्दरी पुत्री जिनकी, विद्या उत्तम जिसे मिली।
भरत हि प्रथम चक्रवर्ती थे, कामदेव थे बाहुबली॥ 155॥

★★★

ऋषभ-देव ने ब्राह्मी को दी, लिपि सुविद्या सौम्य भली।
द्वितीय पुत्री श्रेष्ठ सुन्दरी, अंक सुविद्या जिसे मिली॥
भोग-भूमि से कर्म-भूमि में, आये उद्यम को सीखा।
कृषि करो या ऋषि बनो अरु, वर्ण बनाना भी सीखा॥ 156॥

★★★

असि, मसि, कृषि, वाणिज्य सुविद्या, शिल्प छहों इन कर्मों को।
ऋषभ-देव ने यहाँ बताया, न्याय सहित सत् कर्मों को॥
ब्रह्मचर्य ले पुत्री द्वय ने, पूज्य-पिता सम्मान किया।
अन्य, पिता से ऊँचा न हो, अतः निजी न विवाह किया॥ 157॥

★★★

अयोध्या का वह राज्य दिया था, भरत पुत्र को शुभकारी।
बाहुबली को पोदनपुर का,- राज्य दिया था हितकारी॥
भरत नाम से आर्यखण्ड का, भारत यह शुभ नाम हुआ।
भरत ने वर्ण व्यवस्था दी जब, पूर्ण व्यवस्थित काम हुआ॥ 158॥

नीलाञ्जना के नृत्य मध्य में, मृत्यु का जो दृश्य दिखा।
असार है संसार ही सारा, क्षणिक भोग हैं तभी लखा॥
जगत् विनश्वर के चिंतवन से, प्रभु वैरागी बने महान।
प्रथम रूप से दीक्षा लेकर, संयम तप मय जिनकी शान॥ 159॥

★★★

लौकान्तिक देवों ने आकर, धन्य-धन्य कह नमन किया।
स्वर्गिक इन्द्रों ने आकर के, उठा पालकी गमन किया॥
वन में जाकर प्रभु ने अपने, वस्त्राभूषण त्याग दिये।
केश-लोंच कर पञ्च मुट्ठी से, पञ्च महाव्रत धार लिये॥ 160॥

अक्षय हुआ आहार (अक्षय-तृतीया)

छह-मास उपवास ध्यान कर, -प्रभु जी निकले चर्या को।
था अन्तराय कर्म प्रभु का, ना बदला निज चर्या को॥
एक वर्ष इक माह नव दिनों, -बाद प्रभो आहार हुआ।
नृप श्रेयांस व सोम रहे जो, तब गृह विधि आहार हुआ॥ 161॥

★★★

हुआ अक्षय आहार जहाँ पर, अक्षय तृतीया नाम हुआ।
इस तिथि पर शुभ-भाव किये जब, भवि का मंगल काम हुआ॥
एक हजार वर्ष तप कीना, कैवलज्ञ सुख पाया था।
चौसठ ऋद्धि-धारी- जिन का, समवसरण रचवाया था॥ 162॥

★★★

इन्द्राज्ञा से समवसरण की, अद्भुत रचना जग न्यारी।
समवसरण सभाएँ द्वादश, प्रभु वाणी खिरती प्यारी॥
वृषभसेन जी बने थे गणधर, दिव्य ध्वनि समझाते थे।
जिसको सुनकर भविजन सारे, तृप्त सभी हो जाते थे॥ 163॥

शेर, गाय भी एक जगह जहँ, जल पीते यह अतिशय जान।
प्रभु का उत्तम समवसरण लख, चकित हुआ था पूर्ण जहान्॥
लाखों वर्षों समवसरण से, जग उद्धार हुआ मानो।
भरत, बाहुबलि, ब्रह्मी, सुन्दरी, हुए दीक्षित सब जानो॥ 164॥

★★★

आदिनाथ प्रभु अष्टापद से, मोक्ष-गये शिव धाम खुला।
बाहुबलि वे भरत भी ध्यानी- बने उन्हें फिर मोक्ष मिला॥
पदवी बिना हि अनन्तवीर्य वे, मोक्ष गये थे सर्व प्रथम।
पदवी धारी बाहुबली फिर,-मोक्ष गये यह सर्व कथन॥ 165॥

ऋषभ-देव पञ्चकल्याणक तिथियाँ

अषाढ़ कृष्णा दोज तिथि को, गर्भ में आये आदि प्रभो।
शुभ-तिथि चैत्र कृष्ण नवमी पर, जन्म लिया था आदि प्रभो॥
इसी तिथि पर दीक्षा भी ली, तप कल्याणक हुआ प्रभो।
फाल्गुन कृष्णा गयारस तिथि पर, बने केवली आदि प्रभो॥ 166॥

★★★

बारह योजन समवसरण था, वाणी अमृत लाभ हुआ।
वृषभसेन गणधर प्रभु द्वारा, जिन-वाणी का अर्थ हुआ।
भव्यों द्वारा धर्म ग्रहण कर, सार्थ मोक्ष पुरुषार्थ हुआ।
माघ कृष्ण शुभ चतुर्दशी को, आदि प्रभो निर्वाण हुआ॥ 167॥

महावीर जयन्ती महोत्सव

चैत माह की त्रयोदशी को, वीर प्रभो ने जन्म लिया।
स्वार्गिक देवों ने आकर के, प्रभु का जय-जयकार किया॥
नन्द्यावर्त भवन पावन था, जिसमें प्रभुवर जन्में थे।
त्रिशला माँ सिद्धार्थ पिता वे, बड़भागी हो, सुखमय थे॥ 168॥

मेरु पर्वत पर इन्द्रों से, तीर्थंकर अभिषेक हुआ।
क्षीरोदधि का जल लाया था, नृत्य-गान शुभ नेक हुआ॥
कोटि वाद्य व जय-जय ध्वनि से, गगन सुगुंजित हुआ महान।
खुशियाँ छाईं मधुर गान से, सुख वारिधि मय हुआ जहान॥ 169॥

★★★

एक हजार निज नेत्रों द्वारा, देख, इन्द्र ने नृत्य किया।
ताण्डव नृत्य हि परम खुशी से,-हुआ जगत् को तृप्त किया॥
वीर प्रभो की परम्परा से, जिनवाणी जो धार बही।
केवलज्ञानी, गणधरादि से,- पूजित निज का सार सही॥ 170॥

श्रुत-पञ्चमी-पर्व महोत्सव

श्रुत-सु-केवली, से बहती वह, श्रुतधारा जिनने पायी।
थे धरसेन जु महा-सूरि वे, जिनसे धारा बच पायी॥
पुष्पदन्त व भूतबली को,- दिया आपने श्रुत का ज्ञान।
षट्खण्डागम रचे जिन्होंने, झुके देवगण दे सम्मान॥ 171॥

★★★

श्रुत-पञ्चमी-पर्व हि पावन, जग में खुशियां लाता है।
श्रुत, गुरु-पूजा गुणगानों से, सबके मन को भाता है॥
शास्त्र सजावट प्रवचनमाला, प्रभावना का अंग रहा।
पुण्य बढ़ाता सुख को लाता, होता गुरु सत् संग रहा॥ 172॥

शास्त्राध्ययन-महिमा

रचे हजारों ग्रन्थ हमारे, आचार्यों ने शुभकारी।
पढ़ें, बढ़ेगा अनुभव उत्तम, मोक्ष-मार्ग-मय सुखकारी॥
जन्मों-जन्मों तक भी उनका, कर्ज चुका क्या पायेंगे।
तपस् साधना के अमृत को, पियें सदा गुण गायेंगे॥ 173॥

ग्रन्थों का वह सार ज्ञान-मय, चरित जगत् में शोभित हो।
ज्ञान आचरण बिना, गंध बिन,-पुष्प-समा क्या शोभित हो॥
थोड़ा-सा भी ज्ञान अगर हो, विस्मृत भी वह हो जावे।
समदर्शी वह अगले भव में, केवलज्ञानी-पन पावे॥ 174॥

★★★

रत्न-पिटारा मोक्ष-शास्त्र है, द्रव्य सु-संग्रह साथ रहा।
इष्ट रहे उपदेश आत्म का, समाधि का वह तंत्र कहा॥
सर्व अर्थ की सिद्धि जिसमें, ज्ञानार्णव कहलाता है।
आत्म-अनुप्रेक्षा-के भावन से, नियमसार भी भाता है॥ 175॥

★★★

सार हि मूलाचार मिले तो, प्रवचनसार वहाँ आता।
आत्मा के अनुशासन द्वारा, तत्त्वसार फिर मिल जाता॥
जीव, कर्म का काण्ड जहाँ भवि, सम्यक्ता से पाते हैं।
न्याय-दीप से आगम के वे, ज्ञाता भी बन जाते हैं॥ 176॥

★★★

जहाँ प्रश्न के उत्तर मिलते, रत्न मालिका का हि योग।
जैनागम के संस्कार से, पढ़ते भवि आगम-अनुयोग॥
तीर्थंकर के समवसरण में, पञ्चास्तिकायों को सुन।
दर्शन आदि पाहुड़ से भी, आतम में चलता गुन-गुन॥ 177॥

★★★

बचपन का वह संस्कार जो, धर्म भावना लाता है।
पर्यूषण-पीयूष पिलाकर, सम्यक् ध्यान जगाता है॥
हृदय जैन शासन का उत्तम, गुरु-गुण महिमा गाता है।
हो परमार्थ हि जहाँ साधना, आत्मोद्धार कराता है॥ 178॥

हो सन्मार्ग-प्रभावना जहँ, तीर्थोदय निश्चित होगा।
जिनवर स्तुति समवसरण में, गा-गाकर भवि नत होगा॥
आर्जव-मय शुभ कविताओं से, हृदयशांति मिल जावेगी।
सदाचार की सदा सूक्तियाँ, निश्चित ही मन भायेंगी॥ 179॥

★★★

समयसार के समयोदय से, आध्यात्मिक जीवन होगा।
ज्ञान, ध्यान, तप-मय वह जीवन, अन्तादि श्रीमत् होगा॥
कथनी-करनी एक रहेगी, षड् आवश्यक नित होंगे।
पञ्च-महाव्रत पञ्च-समितियाँ, आदि मूलगुण भी नित होंगे॥ 180॥

साधु-साधना एवं सावधानी

बारह तपादि उत्तर-गुण सह,- तीन गुप्तियाँ साधु रखें।
दूर, गूढ़, प्रासुक, अविरोधी, शौच हेतु थल ध्यान रखें॥
कूप, नदी, वर्षा के जल से, क्रिया पालने में मन हो।
सांसारिक उन आरम्भों से, दूर रहे शुभ जीवन हो॥ 181॥

भव्य-सम्यक्त्वी-साधु-सेवा-फल

तन्त्र-मंत्र मिथ्यात्व पास ना, परिग्रह न, मन पावन हो।
पिच्छि, कमण्डलु, शास्त्र उपकरण, भवि दें धर्म-सु-साधन हो॥
महा-पुण्य से भरे भक्त वे,-दुःखी न रहते कभी यहाँ।
तीर्थ-यात्रा साधु जनों की,-करवाते अति-पुण्य महा॥ 182॥

धर्म परिरक्षण-भावना

शास्त्र-प्रकाशन, श्रुत का रक्षण, करते, होने भव से पार।
धर्म-संस्कृति सदा हि चलती, अनुभव मिलता सुखमय सार॥
आयतनों की रक्षा से ही, रत्नत्रय की वृद्धि हो।
प्रतिमा निर्मित, संरक्षण से, अति सुख की समृद्धि हो॥ 183॥

धर्म-पालन का फल

धर्मात्मा को चार दान दें, धर्म बढ़ाते जो उत्तम।
अपने शुद्ध आचरण से वे, लक्ष्य पायें वे परमोत्तम॥
धर्म-प्रभावना करते बढ़ते, मोक्ष-मार्ग में भविजन नेक।
ध्यान करें, सल्लेखन भी वे,- धारें, पाते सौख्य अनेक॥ 184॥

★★★

णमोकार व त्याग नियम सह, सल्लेखन जो करता है।
लौकांतिक बन इक ही भव में, मोक्ष सुपद को गहता है॥
अथवा दो से तीन भवों में, मोक्ष महा-सुख पाता है।
अनन्त-गुणों का स्वामी बनकर, लौट कभी न आता है॥ 185॥

भक्ति-भावना

स्तोत्रों में रहा स्वयंभू, चौबीसी के गुण गायें।
भक्तों को जो अमर करे उस, भक्तामर से सुख पायें॥
सदा एक ही भाव धर्म-मय, एकीभाव स्तोत्र रहा।
विष को हरा दिया था जिसने, विषापहार स्तोत्र कहा॥ 186॥

★★★

प्रातः उठकर वीतराग को, जिसमें ध्याया जाता है।
तीर्थंकर सब, नवदेवों के, गुण को गाया जाता है॥
सुप्रभात स्तोत्र प्रथम वह, सब जग का कल्याण करे।
उठते ही प्रातः जग पूरा, जिसका नित ही ध्यान करे॥ 187॥

★★★

दर्शन महिमा वीतराग की, जिसमें उत्तम गायी है।
सु-नाम वाला वह अद्याष्टक, स्तोत्र सदा सुख दायी है॥
सिद्धादिक की दशों भक्तियाँ,-भरी गुणों-मय धन्य रहीं।
तीन लोक का सार बताती,-वीतराग-मय अन्य नहीं॥ 188॥

ऋषभ, अजित आदि चौबीसों, तीर्थ-जिनों का गान किया।
रचा स्वयंभू गुण स्तोत्र जो, स्याद्वादवाद का ज्ञान दिया॥
वीतराग गुण जहाँ समाये, शिव-पथ का भी पता दिया।
समन्तभद्र भद्र कहलाये, अतिशय उत्तम बता दिया॥ 189॥

★★★

चन्द्र-प्रभो की स्तुति में जब, 'वंदे' पद का गान किया।
सराग शिव में वीतराग शिव,-प्रकटे, नृप मद हान किया॥
शिव कोटि नृप चन्द्र-प्रभो नम, जैन बना शुभ भाग्य खुले।
राज-पाट को छोड़ा स्वामि-समन्तभद्र-गुरुराज मिले॥ 190॥

★★★

शान्ति-भक्ति में जगत् शान्ति है, रोग-शोक नश जाते हैं।
धर्मी मानव वीतराग-जिन, शांतिनाथ गुण गाते हैं॥
पूज्य-पाद आचार्य जिन्होंने, कहा हि दृष्टि प्रसन्न करो।
नयनों में ज्योति भर आयी, अतिशय प्रकटा धन्य अहो॥ 191॥

★★★

भक्तों को जो अमर बनाये, भक्तामर कहलाता है।
जो भी पढ़ता भक्ति-भाव से, जीवन सुखी बनाता है॥
मानतुंग आचार्य जहाँ थे, वहाँ कोठियाँ अड़तालीस।
ताले, जंजीरे भी टूटीं, पद्य रचे जब अड़तालीस॥ 192॥

★★★

वादिराज वे सूरि बड़े थे, एकीभाव रचा जिनने।
ऐसे महा स्तोत्र पाठ से, नष्ट हि कुष्ट किया जिनने॥
निरोग-काया स्वर्ण-मयी सी-पीयी, जिनने धन्य हुए।
जन-मन में बहु-भक्ति उमड़ी, गुण-गाने संलग्न हुए॥ 193॥

विषापहार स्तोत्र महा है, जहाँ प्रभो का शुभ गुणगान।
किया धनञ्जन कविराज ने, वीतराग का जिसमें ध्यान॥
फैला विष था तन में सुत के, जहाँ विषैले अहि का पूर्ण।
स्तुति गायी, गंधोदक दे, हुआ पलायन विष सम्पूर्ण॥ 194॥

भक्ति का फल

भक्त बने जो भगवन् बनता, भक्ति बिना न पूज्य बने।
पूजा पूज्य बनाती जग में, पूजा से प्रभु पूज्य बनें॥
आदर, विनय व भक्ति स्तुति, उपासना परिचर्या हो।
अतिशय मय वह पुण्य भरे वा, कर्म क्षयी शुभ क्रिया हो॥ 195॥

★★★

सदा भक्तियाँ तीर्थंकर के,-प्रकृति-बंध में काराण हैं।
जग कल्याणी बने हि जीवन, पावन मोक्ष सु साधन है॥
मण्डल-विधान ये महापुण्य से-भरे जिनागम कहता है।
इन्द्र नरेन्द्र का वैभव दे वा-जिनवर सौख्य अमरता है॥ 196॥

तीर्थ-भावना

सदा तीर्थ का संरक्षण हो, जीर्णोद्धार करो मन से।
धन,मन से सहयोग करो नित, नव निर्माण करो तन से॥
कम-से-कम इक वर्ष में जाओ, तीर्थों का वंदन करने।
पूजन जिनाभिषेक रचाओ, संस्कृति की रक्षा करने॥ 197॥

पञ्च-महातीर्थ वंदन

पञ्च तीर्थ हैं तीर्थंकर के, सुप्रसिद्ध माने जाते।
श्री सम्मेद-शिखरजी उत्तम, चम्पा, पावापुर भाते॥
अष्टापद गिरनार पूज्य हैं,-चरण जिनालय जहँ निर्माण।
तीर्थंकर-चौबीस-जिनों ने, पाया था जहँ पद निर्वाण॥ 198॥

सर्व-सिद्ध व अतिशय क्षेत्रों, की भी रक्षा हो मन्तव्य।
बाहुबली या महावीर जी, कुण्डलपुर रक्षा कर्त्तव्य॥
जम्बूद्वीप या राजगृही हो, बावनगज, तारंग महान।
मुक्तागिरि, कुंथलगिरि उत्तम, द्रौण व नैनागिरि प्रणाम॥ 199॥

★★★

पावागढ़, शत्रुञ्जय प्यारा, अहार, पपौरा, पवा सुजान।
सोनागिरि फिर गढ़ देवों का, सिरोन, शिरपुर नमन प्रधान॥
मांगीतुंगी, गजपंथा अरु, चांदखेड़ि, गोपाचल मान।
वंदन पूजन निशि-दिन करते, सुर-जन नर हि देते दान॥ 200॥

★★★

कुण्डलगिरि श्री आदिनाथ का, क्षेत्र महान कहा जाता।
थूबोन, चँदेरी बड़ा-गाँव, का दर्शन अतिशय सुख लाता॥
मानतुङ्ग, प्रभासगिरि भी, ईशुरअरु बीनावारा।
चूलगिरि, अजमेर अमर है, खजुराहो जो है प्यारा॥ 201॥

★★★

सिद्धोदय व कूट सिद्धवर, क्षेत्र भोजपुर, पटना जान।
सारे जग में प्रसिद्ध जैन वे, बने तीर्थ हैं गुण की खान॥
गोम्मटगिरि अरु पचराई व, गोलाकोट, नवागढ़ सोह।
अपनी अनुपम वीतराग मय, छवि से रहे मनस को मोह॥ 202॥

★★★

उदय-खण्डगिरि, कोटि-शिला अरु, पोदनपुर से मोक्ष गये।
जहँ कल्याणक सिद्ध हुए जिन, अतिशय थल भी पूज्य भये॥
तीर्थ शोभते साधु जनों वा, भक्तों की भक्ति से जान।
जहँ 'आर्जव' मय बिखरे रहते, गुण प्रशस्त वे जिन्हें प्रणाम॥ 203॥

रहा अयोध्या, बद्री द्वय भी, रैवासा अरु सांगानेर।
शौरी-वटेश्वर पदमपुरा व, देय तिजारा पुण्य न देर॥
कलाँ युक्त लाडनूँ जिनालय, बिजौलिया के पारसनाथ।
ताल जबलपुर आदिनाथ वे, नमें पनागर शांतिनाथ॥ 204॥

★★★

बहलना क्षेत्र या वरनावा हो, होय दयोदय, ज्ञानोदय।
रानीला महरौलि करगुवां, आबू महुआ पार्श्वोदय॥
उदयगिरि, मदनपुर हि हो, पावा, बँधा व अभिनन्दन।
पैठन, कचनेर, अहिछत्र हो, काशी, नौगज को वंदन॥ 205॥

★★★

क्षेत्र-भातकुली, दही गाँव व, कुण्डल, अरहन्ता जानो।
पटनागंज व कहो पटेरिया, पजनारी आरा मानो॥
बानपुर व काकंड, हाँसी, क्षेत्र बनेड़िया पूज्य महान।
सजोद सालेड़ सरवाड़ व, प्रताप व चँवलेश्वर मान॥ 206॥

★★★

केशवराय झालरा - पाटन, जहाजपुर भी जहाँ रहे।
नीलगिरि वा तिरुनरूम्-कुण्डू, तपोनिलय भी वहाँ कहें॥
क्षेत्र बहोरीबंद है प्यारा, अरु खन्दारगिरि भी मान।
अमर रहे अमरकण्टक वह, और समसगढ़ पूज्य सुजान॥ 207॥

★★★

क्षेत्र बहोरा कुलचारम भी, मदुरै, टौड़ि फतेपुरी।
देखो टोड़ा रायसेन भी, बिढ़ोर, चित्तामूर सभी।
श्रवणबेलगोला में दिखते, चन्द्रगिरि व विन्ध्यगिरि।
मुनियों के तप त्याग बताते, पुष्प देय मंदारगिरि॥ 208॥

इन्द्रपुरी, मक्सी, केशरिया, तथा वमोतर, नोगामा।
देवारी व रहा सांखना, छिदवार वागोल, बहसूमा॥
कलिंजरा पड़तापुर खण्डार, खेलवाड़ा सु-खूड़ादरी।
मरसल गंज, महेन्द्रवास वा, लूड़वा अतिशयकार मही॥ 209॥

★★★

रत्नपुरी श्रावस्ती, मंगल, सिंहपुरी हो भाग्योदय।
चन्द्रपुरी कम्पिलाक्षेत्र जो, प्रयाग गुणावा वीरोदय॥
भीलोड़ा, कुंभोज, कैथुली, जहाँ तीर्थ गुण पुष्प खिलें।
वीतराग नम, जीव सु-रक्षण, आर्जवता का तीर्थ मिले॥ 210॥

★★★

प्रशस्ति

अशोकनगर में भव्य यह, हुआ सु-वर्षायोग।
बढ़ी प्रभावन धर्म की, महापुण्य संयोग॥
विद्यासागराचार्य की, कृपा रही है पूर्ण।
काव्य-कृति बढ़ती रही, अतिशय मय सम्पूर्ण॥॥

★★★

वीर-मोक्ष पच्चीस सौ, उनन्चास यह जान।
शुभ संवत् पर पूर्ण यह, रचना हुई महान॥
यह सन्मार्ग प्रभावना,-काव्य बना है नेक।
पढ़ें, बढ़ें सन्मार्ग में, '**आर्जव**' रहे विवेक॥

श्री अन्तादि शतक

(आचार्य श्री आर्जवसागर जी)

विषय-वस्तु

श्री अन्तादि शतक

(आचार्य श्री आर्जवसागर जी)

- मंगल का फल
- विदेह में सदा जैन
- जैनों का सदाचरण
- जैनों की सद्भावना
- कल्याण-परिचय
- ज्ञान से चारित्र महान
- सम्यग्दर्शन से जीवन शोभा
- मोक्ष में शाश्वत सुख
- वास्तविक आत्म स्वरूप
- स्वयंकृत कर्मों का फल
- बहिरात्मा
- स्वभाव की प्राप्ति
- स्याद्वाद
- अनेकान्त
- नयो से वस्तुतत्त्व
- लक्ष्य प्राप्ति
- पुण्य शुभरूप है।
- दयालु देवों से भी आदरणीय
- व्रत धारण का फल
- तीर्थदर्शन का फल
- धर्म पुरुषार्थ का फल
- अर्थ पुरुषार्थ में न्यायशीलता
- स्वार्थी का काम पुरुषार्थ विफल
- मोक्ष पुरुषार्थ की सफलता
- शुभ सुकून में मंगल
- त्यागी के आभूषण
- नियत और अनियत
- पुरुषार्थ हो प्रमाद नहीं
- सत्पात्र सेवा में पुण्य
- वीतरागी में लौकिक चाह नहीं
- वैरागी का पांच पाप त्याग
- अशुभ और शुभध्यान
- वीतराग श्रद्धा से धर्मध्यान
- गुरु आशीष से चारित्र प्राप्ति
- जवानी में दृढ़ चारित्र
- दस धर्म
- विषय कषाय विजय
- खादी-खाकी से सबक
- पश्चात्ताप व कर्म कर्ज मुक्ति
- सल्लेखना कृशीकरण
- आत्म शुद्धि
- कर्म नाश से मोक्ष प्राप्ति
- मोक्ष में अलौकिक सुख
- सिद्ध अक्षय मंगल पूज्य
- पावन लक्ष्य में सिद्धों का ध्यान
- जिनश्री पायें

मंगलाचरण

श्री परमेष्ठी, हैं शुभ मंगल।
नाम लेयँ सब होता मंगल।।1।।

मंगल श्री सद्ज्ञान है मंगल।
समवसरण-श्री मोक्ष हो मंगल।।2।।

मंगल का फल व कामना

मंगल-मय, जीवन की राह।
पूर्ण करे, शिव -मंजिल चाह ।।3।।

चाह हमारी, सिद्ध बनें हम।
प्रथम, भारती-सेवक हर दम।।4।।

जैन; सद्-गुरु-सेवक

दम टूटे न, निश-दिन रैन।
सुगुरु सेवा-रत हों जैन।।5।।

युगादि में प्रथम व विदेह में सदा जैन

जैन आद्य, तीर्थंकर बेन ।
रहें विदेह में सतत हि जैन।।6।।

जैनों का सदाचरण

जैन जगत् में, रहती चैन।
जिनेन्द्र पूजते, सदा हि जैन।।7।।

जैन-आचार बढ़ावे प्रेम।
रहें जगत् -प्रशंसित जैन।।8।।

जैनों की सद् -भावना

जैन; जगत् का चाहें क्षेम।
बुरा कभी न चाहें जैन।।9।।

जैनों की न्यायप्रियता

जैन लेन-इंसाफ हि देन।
सदा अहिंसा पालें जैन।।10।।

जैन- विधि , निःस्वार्थी देन।
जाने देश-विदेश हि जैन।।11।।

जैन अमर हों -जिन -वच जान।
पूर्ण -विश्व में, नामी मान।।12।।

निरभिमानी का स्वाभाविक सम्मान

मान-चाह न हो सम्मान।
लोक- रीति है,जन श्रुति जान।।13।।

शाश्वत, आत्म व कल्याण पर श्रद्धान

जान आत्म जहँ जीव प्रधान।
धर्म करे,निश्चित कल्याण।।14।।

कल्याण-परिचय

कल्याण हि शुभ- मोक्ष महान।
अनंत-सौख्य का, होता पान।। 15।।
पान निजी सुख, दुःख की हान।
अनंत दर्श वा, जहाँ हो ज्ञान।।16।।

ज्ञान से चारित्र महान

ज्ञान अल्प पर, चरित प्रधान।
चरित जहाँ हो, गुण की खान।।17।।

सम्यग्दर्शन से जीवन-शोभा

खान-मूल्य, समकित-सह आय।
चेतन हीरा,सबको भाय।।18।।

चेतन रस में, भव भोग फीके

भायें भोग न, धर्म सुहाय।
चेतन रस में,वह पग जाय।।19।।

वीतरागी को मोक्ष सुख

जाय राग, तब श्रमण कहाय।
श्रमण अक्ष न, शिव सुख पाय।।20।।

मोक्ष में शाश्वत अनंत सुख

पाय अनंत हि गुण-भंडार।
नश्वर-जग से होता पार ।।21।।

पार जगत् से होता जीव।
सिद्ध बने हि सुखी-अतीव ।।22।।

अतीव-शांति जहँ, शिव का थान।
अजर, अमर- पद है वह मान।।23।।

त्रिलोकी, त्रिलोक पूज्य सिद्धात्मा

मान -देय वा, पूजे लोक।
पूर्ण- लोक का करे विलोक।।24।।

निश्चय आत्म- स्वरूप

विलोक वास्तविक आत्म- स्वरूप।
रहा अरस व, अशब्द, अरूप।।25।।

अरूप चेतन- निश्चय होय।
आत्म नित्य वह, निज में खोय।।26।।

सिद्धों का संसार में अवतार नहीं

खोय नहीं फिर, स्वयं स्वभाव।
घृत; फिर दुग्ध न आये भाव।।27।।

निश्चय से जीव-पुद्गल में भेद

भाव -जीव का, पुद्गल न।
जड़ वह निश्चय जीव भी न।।28।।

स्वयं- कृत कर्मों का फल

न हो कर्त्ता ,कोई किसी का।
करनी जैसी, फले उसीका।।29।।

सुख व दुःख पुण्य पापाश्रित हैं

उसीका हि दुःख, पापाश्रित है।
सुख भी उसका, पुण्याश्रित है।।30।।

निश्चय से स्वात्मा के अलावा सब पर हैं

है ना आश्रित कोई किसी पर।
निश्चित; निज से, सब ही हैं पर।।31।।

पर को स्व माने वह बहिरात्मा

पर में भटके, बहिरातम जो।
रमे ही निज में अन्तरातम वो।।32।।

वो परमातम-हैं कहलाते।
घाति, अघाति कर्म जलाते।।33।।

विभाव के अभाव में स्वभाव की प्राप्ति

जलाते अपने,जो दुर्भाव।
निज में पाते , निज के भाव।।34।।

पर गौण , निज मुख्य है स्याद्वाद

भाव करे जो,निज के याद।
मुख्य गौणता,-में स्याद्वाद।।35।।

किसी गुण-धर्म को नहीं नकारना अनेकांत

स्याद्वाद; गुण मुख्य गौण हों।
धर्म अनेकों, अनेकांत हो।।36।।

वस्तु के एक पक्ष में हठ करना
एकांत -मिथ्यात्व

हो एकांत अगर पक्ष जो।
मिथ्या-दृष्टि कहलाता वो।।37।।

'भी' में अन्य पक्ष का
अस्तित्व व अनेकांत

वो होता जब 'भी' के भीतर।
अनेकांत से होता है तर ।।38।।

नयों में सभी पक्षों के अंश -
अंश का कथन

तर हों धर्मों से पूरक नय ।
अंश-अंश के ग्राहक हों नय।।39।।

नयों से वस्तु तत्व की गहराई व
कल्याण

नय से जीवन नया बनाओ।
गहरे जाकर भी तर जाओ।।40।।

लक्ष्य प्राप्ति में त्याग, संयम चाहिए

जाओ अपने, लक्ष्य को पाओ ।
त्याग साथ जब, संयम पाओ।।41।।

संयम के सह सम्यग्दर्शन आवश्यक है

पाओ समदर्शन-सह संयम।
समदर्शन बिन, मिथ्या हो यम।।42।।

शोभनीय-आचार

यम,नियम सब, निरतिचार हों।
भाते सबको, सद्-विचार हों ।।43।।

पुण्य शुभ रूप है

हों क्षय शीघ्र ही, अशुभ-पाप जो।
पुण्य-बंध हो,रहता शुभ जो।।44।।

दया-धर्मी देवों से भी आदरणीय

जो भी धर्मी, दया बढ़ाये ।
देवों से भी, आदर पाये।।45।।

व्रत-धारण का फल व प्रभाव

पाये व्रत से,स्वर्ग संपदा।
सुर-गण सेवक, आये न विपदा।।46।।

विदेह- क्षेत्र दर्शन का फल

विपदा न हो, विदेह में जा ।
तीर्थ लखे, मिटता विधि-कर्जा ।।47।।
कर्जा मिटे वह, क्षेत्र है पावन।
पूज्य- पुरुष का, उत्तम-जीवन।।48।।

धर्म-पुरुषार्थ की प्राथमिकता

जीवन उत्तम, पुरुषार्थी बन।
होता, प्रथम जो धर्मार्थी बन।।49।।

अर्थ-पुरुषार्थ में न्यायशीलता

बन जाये गर, धन का अर्थी।
न्याय न भूले, न बन स्वार्थी।।50।।

स्वार्थी का काम पुरुषार्थ विफल

स्वार्थी काम,न होय सफल वह।
हो संतति-व्यवहार विफल वह।।51।।

परिग्रह के त्याग में मोक्ष-पुरुषार्थ सफल

वह धन वैभव, राज्य भी तजता।
हो सन्यासी, मोक्ष भी भजता।।52।।

पुण्य और कर्म-निर्जरा में सुख

भजता जिनवर, पुण्य कमाये।
कर्म-निर्जरा कर, सुख पाये ।।53।।

शुभ-कर्मों से गुण का समुद्र भरें

पाये प्रभु -सम, गुण का सागर।
बूंद-बूंद से भरती गागर।।54।।

मंगलकारक में शुभ-सुकून

गागर; मंगल-कारक जानो ।
शुभ-सुकून, उपकारक मानो।।55।।

संसार- मार्ग में दुख, मोक्ष- मार्ग में सुख

मानो मोक्ष का मार्ग सुखद है।
भव-कारक भव-मार्ग दुखद है।।56।।

त्यागी-पुरुषार्थी के गुण हैं आभूषण

है पुरुषार्थी, भोग जो तजता।
संयम, व्रत के, गुण से सजता।।57।।

भोगी, निकम्मा काल के भरोसे रहता है

सजता न जो, व्रत पालन कर।
भोगी; नियत में निज-मानस कर।।58।।

अनियत मान पुरुषार्थ करो

कर पुरुषार्थ, कार्य जभी हो।
अनियत कहना, उसे तभी हो।।59।।

पुरुषार्थ कर कार्य नहीं तब भाग्य प्रमुख

हो पुरुषार्थी, कार्य न हो जब।
नियत-भाग्य वह, कहना हो तब।।60।।

प्रमाद-तज नित पुरुषार्थ करें

तब निश-दिन, पुरुषार्थ न हो कम।
तज प्रमाद, कर्त्तव्य करें दम।।61।।

सत्पात्र दान व सेवा पुण्यकारक है

दम-भर दान, सुपात्री सेवा।
मिलती सुखकर, पुण्य की मेवा।।62।।

लौकिक चाह में
वीतराग पूजा न भूलें

मेवा में न, फूले सेवक।
वीतराग का, नित हो पूजक।।63।।

व्रत, शील निर्दोष पालें

पूजक शीलाचारी होवे।
व्रत;निर्दोषी पालक होवे।।64।।

सजग हो, चतुराहार-तज उपवास करें

होवे सजग ही,अनशन करता।
चतुराहार सभी है तजता।।65।।

वैरागी पंच पाप छोड़े

तजता अघ को, वह वैरागी।
विषयों का वह, ना हो रागी।।66।।

राग में बंध, ध्यान में संवर

रागी कर्मों से बंधता है।
बंध-रहित ध्यानी होता है।।67।।

अशुभ-ध्यान तज शुभ-ध्यान हों

है ध्यानी, न आर्त -रौद्र हों ।
शुक्ल नहीं तो धर्म ध्यान हों ।68।।

वीतराग की श्रद्धा से धर्म-ध्यान शुरु

हों धर्म वे ध्यान शुरु तब।
उर होवें देव, शास्त्र, गुरु जब।।69।।

निर्ग्रंथ-गुरु आशीष से चारित्र प्राप्ति

जब आशीष, गुरु का मिलता।
चरित्र सरोवर-, का दल खिलता।।70।।

जवानी का चारित्र बूढ़ेपन तक साथ

खिलता चरित जवानी हो।
बूढ़े तक ना हानि हो।।71।।

जवानी की शक्ति अधिक महत्वपूर्ण

हो न व्रती,जब जवान होवे ।
शक्ति ना , जब बूढ़ा होवे।।72।।

शक्ति-सह व्रत की भावना सच्चा योग

होवें दांत, तब चने न मिलते।
चने मिले जब, दांत ही झड़ते ।।73।।

क्षमा स्वभाव

झड़ते कठोर- वचन जो सहते।
क्षमा- स्वभावी ज्ञानी रहते।।74।।

मृदुता पालन

रहते कोमल, मृदुता पालें।
मान-अपमान में रुचि हि ना लें।।75।।

सरल स्वभावी

लें न रुचि वे जहाँ वंचना।
सरल-स्वभावी छल भी रंच न।।76।।

विषय-अलोभी-अध्यात्म लीन

ना लोभी विषयों के होते।
अध्यातम में निश-दिन खोते।।77।।

सत् वादी की न्यायीजनों में आत्मीयता

खोते न वे सत्-वादी-पन।
न्यायी जन में रख अपनापन।।78।।

संयमीजनों का जीव-दया पालन

अपना-पन रख जीव बचाते।
संयम-मय जीवन अपनाते।।79।।

तपस्वी के उपवासादि पवित्र-तप

अपनाते हैं तप-मय जीवन।
उपवासादि करते पावन।।80।।

त्याग-धर्मी ज्ञान, ध्यान में लीन

पावन, त्याग-मयी है साधक।
ज्ञान, ध्यान के, नित -आराधक।।81।।

आकिंचन्य-धर्मी आत्म-लवलीन

आराधक हैं, निज-आतम के।
किञ्चित न संग शुद्धातम के।।82।।

ब्रह्मलीन की परिषहों में समता

शुद्धातम के ध्यान में रहते।
ब्रह्मलीन मुनि, परिषह सहते।।83।।

सहनशीलता में कर्म -निर्जरा

सहते बाधा, कर्म- भगावें।
भव के शत्रु, सभी हरावें।।84।।

विषय-कषाय-जयी, मौनी स्वात्म-हितैषी हैं

हरावें विषय, कषाय वे नित ही।
मित बोलें निज,करते हितही।।85।।

जग- हितकारक को जगत् का स्नेह मिले

हितही कर मुनि, मित्र बनाते।
पूर्ण- जगत् का, नेह जो पाते।।86।।

गृहस्थ व्रती की पोशाक सादी होती है

पाते गृही-पद, भूषा खादी।
नेता भी वह, पहने खादी ।।87।।

न्याय के साथ खादी व
खाकी पोशाक की शोभा

खादी पहने हो, या खाकी।
न्याय चले तो, कर्ज न बाकी।।88।।

अन्याय में खाकी, खादी में भी बर्बादी

बाकी कर्म-कर्ज; बर्बादी।
खाकी हो या, फिर वह खादी।।89।।

दया बिना खादी शोभनीय नहीं

खादी मोटा, है पहनावा।
दया-धर्म बिन, हो पछतावा।।90।।

पश्चाताप व दंड से जीवन की शुद्धि

पछतावा से शिक्षा पावे।
कर्ज-चुका, भव-सौम्य बनावे।।91।।

संयमित जीवन से पवित्रता हासिल

बनावें अपना, संयमित-जीवन।
व्रत, चारित पा,भव हो पावन।।92।।

सल्लेखना में कषाय व काया का कृशीकरण

पावन हो भव,सन्यासी बन ।
कृश हो कषाय, व व्रतधारी तन।।93।।

तन विरागी की आत्म-शुद्धि

तन-सह राग,सूखता जानो।
बढ़े विशुद्धि निज-शुद्धि मानो।।94।।

शुद्धात्मा का ध्यानी कर्म जलाता है

मानो शुद्धातम ध्यानी वह।
कर्म-जलाता, नित ध्यानी जहँ ।।95।।

कर्मनाश से मोक्ष की प्राप्ति

जहँ ध्यानी जब कर्म नशाता।
भव्य सुदृष्टि वह, सद्गति पाता।।96।।

मोक्ष में अलौकिक परमोत्तम -सुख

पाता सौख्य,अलौकिक उत्तम।
गुण-गण पाता, है परमोत्तम।।97।।

सिद्ध; अक्षय मंगल पूज्य हैं

परमोत्तम जिन-सिद्ध जहाँ हैं।
अक्षय मंगल, पूज्य महा हैं।।98।।

पावन-लक्ष्य मोक्ष हेतु जिन, सिद्धों का ध्यान

हैं जिन, ध्यान-लक्ष्य में पावन।
जिनसे उन्नत होता जीवन।।99।।

सरलता से आनंदमयी मोक्ष- लक्ष्मी को पायें

जीवन-स्वाद बढ़ाये मिश्री।
'आर्जव' बन भवि, पाये जिनश्री।।100।।

प्रशस्ति

श्री अंतादि यह शतक, लिखी सूक्ति मय जान।
आत्म- विशुद्धि काज यह, नित्य पढ़ें धीमान।। 101।।

सम्मेदाचल के निकट, रहा ईसरी जान।
जहाँ लिया संकल्प यह,कृति का उत्तम मान।। 102।।

खनियांधाना में हुई, कृति है पूर्ण महान।
विद्यासागर- सम बने, 'आर्जवता' की खान।। 103।।

पच्चीस सौ पचासवाँ ,वीर प्रभु- निर्वाण।
श्री अंतादि यह शतक,-पूर्ण करे कल्याण।। 104।।

क्षेत्र-महिमा

-आचार्य आर्जवसागर जी

सिद्ध वा अतिशय क्षेत्र जहाँ हो।
निर्मल मन व विशुद्धि वहाँ हो।
पूर्व स्मृतियाँ संस्मरण वे।
याद आ जाते प्रभो चरण वे॥
पश्चात्ताप मन, विकार छोड़े।
आत्म गुणों में मन को जोड़ें॥
भौतिक साधन याद न आवें।
प्रभु, गुरु कीर्तन दिल से गावें॥
वीतराग छवि नयन समाती।
प्रभु वाणी महिमा सुख लाती॥
गुरु मुख से जिनवाणी सुनते।
बढ़ें नियम व्रत मन में गुनते॥
भूल जगत् को निज में झूलें।
मन प्रसन्न हो, खुस हों फूलें॥
पुण्य बढ़ाते, चारित बढ़ाता।
शिव सोपान हि भवि वह चढ़ता॥
गुरु आशीष जहाँ मिल जाता।
नहीं कष्ट कुछ भवि वह पाता॥
क्षेत्र की महिमा बड़ी निराली।
शिव मंजिन को देने वाली॥

अ.क्षे. थूबोनजी 10-12-23

विनयांजलि

आचार्य श्री आर्जवसागर जी

विषय-वस्तु

विनयांजलि

आचार्यश्री आर्जवसागर जी

- विद्या गुरु विनयांजलि
- विद्यासागर की छवि.....
- जैन परंपरा गीत
- मुनि मूरत के शिल्पी

आचार्य श्री आर्जवसागर जी

जिसमें देखी सदा सहजता।
जिसमें देखी थी गंभीरता।
जिसमें पायी समय उपयोगिता।
उनके गुण को हम भी पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।1।।

स्वावलंबित था गुरु जीवन।
त्याग,तपस्या थी भी पावन।
स्वाध्याय मय था शुभ जीवन।
उन जैसे जीवन को पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।। 2।।

नहीं तिथि थी अतिथि थे वे।
नहीं नाम गृहि का लेते थे।
आवश्यक में कमी नहीं थी।
उन सम ज्ञानी हम बन जायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।3।।

शीत विजय को वे करते थे।
उष्ण परिषह वे सहते थे।
मेवों पर आशा ही ना थी।
सहनशीलता हम भी पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।4।।

पकवानों की चाह नहीं थी।
मधुर स्वाद की आश ही न थी।
सुख-दुख में नित समता भी थी।
उन जैसी समता हम पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।5।।

दृढ़ आस्था निज कर्मों पर थी।
मिथ्यामत पर पूर्ण अरुचि थी।
परिग्रह की न आश कभी थी।
दृढ़ श्रद्धानी जग में भायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।6।।

नहीं आलसी मन था जिनका।
अध्यातम जीवन था जिनका।
दयालुता के भी गुण गायें।
दया धर्म मय जीवन पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।। 7।।

गुरुकुल के वे निर्माता थे।
जिनालयों के उद्धारक थे।
शिला तीर्थ के प्रेरक भी थे।
जन-जन में यह अलख जगायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।8।।

आसन विजयी पूर्ण गुरु थे।
योग धारते जहाँ गुरु थे।
विहार करते अथक पूर्ण थे।
उनके योगों को हम पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।9।।

वर्तमान में बहु- दीक्षक थे।
मोक्षमार्ग के भी शिक्षक थे।
शिक्षाओं के लेखक भी थे।
गहरे अनुभव जिनसे पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।10।।

काव्य रचयिता संस्कृत में थे।
हिंदी रचयिता महाकवि थे।
सिद्धांतों के अध्येता थे।
उन सम चिंतवन हम सब पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।11।।

आकर्षक भी तन था जिनका।
पवित्र -पावन मन था जिनका।
कभी निंद न वचन सुनाये।
गुरु वचनामृत सबको भायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।12।।

शिक्षा में संस्कार खूब था।
अनेकांत में मन संपूर्ण था।
अनेकार्थ की शैली पायें।
जिनवाणी में हम रच जायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।13।।

बुंदेली में रुचि रखते थे।
दूर दृष्टि भी सब रखते थे।
मेरी-मेरी न करते थे।
ऐसी दृष्टि हम भी लायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।14।।

मिथ्या मत के खण्डक गुरु थे।
शिष्यों के अनुशासक गुरु थे।
आर्ष परंपरा धारक गुरु थे।
उसी प्रथा को सब अपनायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।15।।

प्रवचन के सुखकर कर्त्ता थे।
कथानकों में रुचिकारक थे।
प्रभावना के जो रसिया थे।
ऐसी रुचि भी सब जन पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।। 16।।

कठोर तप के अनुपालक थे।
जंगल में मंगल कारक थे।
नीरसता का रस लेते थे।
इसी त्याग का रस हम पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।। 17।।

दक्षिण जन्मा शरीर जिनका।
सहनशील था जीवन जिनका।
पाप हराने कठोर थे जो।
ऐसे तन मन सब जन पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।। 18।।

धर्म की शिक्षा प्रथम जिन्हें थी।
लौकिक शिक्षा साथ भले थी।
लौकिकता से परहेज भी था।
धर्म मार्ग पर सब जन जायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।। 19।।

वैरागी-पन के चाहक थे।
स्याद्वाद के जो ग्राहक थे।
भोग-विरक्ति के पालक थे।
उसी विरक्ति पन को पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।। 20।।

आश्रम के जो उपदेशक थे।
साध्य- साधना निर्देशक थे।
सल्लेखन में समाधि पर थे।
आत्मलीनता गुरु सम पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।21।।

गुरु समाधि में नित जागृत थे।
वीतराग गुण चिंतवन रत थे।
शुभ ध्यानों में नित्य निरत थे।
हम ध्यानी बन शुभ गति पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।22।।

दस सु-प्रांतों की भू पावन।
गुरु विहार से हुई रज चन्दन।
जैन शासन की ध्वज लहराई।
ऐसी ध्वज को सब लहरायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।23।।

विद्या के सागर गुरु प्यारे।
ज्ञान गुरु के शिष्य थे न्यारे।
'आर्जवता' के मुनि गुण धारे।
ऐसे गुण-धर सद् गति पायें।
ऐसे गुरुवर को हम ध्यायें।।24।।

मुनि दीक्षा पा आपसे, धन्य गुरो उपकार।
विद्यासागर सूरि को, 'आर्जव' नत शत बार।।25।।

फाल्गुन अष्टांहिका सन् 2024
गंजबासौदा-विदिशा (म. प्र.)

विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है

–आचार्यश्री आर्जवसागर जी

हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।।

★★★

आचार्य ज्ञानसागर की, परंपरा जो पायी है।
बुंदेली इस धरती ने ,कीर्ति जिसकी गायी है।
परम दिगंबर मुद्रा में, निर्विकारता लायी है।
परीषहों के दौर में भी, समता अपनायी है।।
हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।। 1।।

★★★

भारत की कर तीर्थ वंदना, पुण्य की कमाई है।
बाल-ब्रह्मचारी रह करके, ब्रह्म ज्योति जगाई है।
तीर्थों पर तव ध्यान की, ध्यान मुद्रा भाई है।
प्रवचन की अद्भुत शैली, शिष्यों को भाई है।।
हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।। 2।।

★★★

आपके हर शिष्य में, समकित धारा पायी है।
समन्तभद्र- सम डंके की, चोट जो लगाई है।
कुंदकुंद सम शेर जैसी, ध्वनि सबमें पायी है।
निर्भीकता की दिव्य शैली, शिष्यों में भायी है।।

हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।। 3।।

★★★

इसी भू-के शिष्यगण वे, शुद्ध कुल में जन्मे हैं।
शुद्धाचारी मात- पिता के, होनहारी ललने हैं।
अभिषेक हो या पूजन हो, खान-पान की शुद्धि है।
देखें जन दर्श मात्र में, विशुद्धि ही पाई है।।
हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।। 4।।

★★★

सिद्धांतों का आलोढ़न जो, हर शिष्य का गहना है।
आडंबर व भौतिकता बिन, जीवन में रहना है।
काव्य-कला, प्रवचन वा, परिषह जय करना है।
आपकी सब कृतियों की, रक्षा मन भायी है।।
हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।।5।।

★★★

मौन और सामायिक की, साधना शुभ पायी है।
भाषा और सिद्धांतों की, शिक्षा भी मन भायी है।
बारह तप में तपा -तपाकर,चोखी आत्म बनाई है।
सोलावानी सोने जैसी, शिष्यातम चमकाई है।।
हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।। 6।।

★★★

हीरे जैसे पहलू निकले, शोभा जग को भायी है।
योग्य शिष्यगण चमके जग में, साधना यही सिखायी है।
भगवन जैसी महा आत्मा, सबकी यहाँ बनायी है।
अतः समाधि से गुरुवर ने,सद्गति संपद पायी है।।
हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।। 7।।

★★★

दीक्षा पायी शिष्यों ने, मोह सुध भुलाई है।
गृह-बंधु नाता न, गुरु लगन लगाई है।
चाहे पास, दूर हों गुरु, परंपरा शुभ भाई है।
'आर्जवसागर' सूरि ने, आर्जव सुरभि पायी है।।
हे गुरुवर! तेरी सूरत, हर शिष्य में समायी है।
विद्यासागर की छवि ही, हर शिष्य में पायी है।। 8।।

11/04/24
विदिशा

जैन- परंपरा-गीत

-आचार्यश्री आर्जवसागर जी

(जन्म- बाल एवं व्रत संस्कार में अवश्य सुनाएँ)

जैन धर्म की परंपरा को सदा निभाना भैया।(बहिना)
धर्म मार्ग की परंपरा को सदा बढ़ाना भैया।(बहिना)

1. सप्त व्यसन कर दुर्जन -संगति -में ना जाना भैया।
देव, गुरु के दर्शन से, भव -सफल बनाना भैया।
गुरु प्रवचन सुन, ग्रंथ-वांचकर ज्ञान बढ़ाना भैया।
श्रमण तीर्थ हैं चलते-फिरते रक्षा करना भैया।।(बहिना)

2. हिंसक खाद्य व निशि भोजन में, न फँस जाना भैया।
धोखे, ठग से छल कपटी भी, ना बन जाना भैया।
निर्लोभी व संतोषी बन, जग में भाना भैया।
दानी उपकारी बनकर तुम, फर्ज निभाना भैया।(बहिना)

3. कुएँ स्रोत के जल- ग्रहण का नियम निभाना भैया।
मोटे दोहरे छन्ने से जल, सदा ही छानना भैया।
मात-पिता को देश छोड़कर,कहीं ना भागना भैया।
नौकर बिन, तुम स्वयं गुरु की,सेवा करना भैया। (बहिना)

4. सराग देव की परंपरा को कभी न लाना भैया।
नव -देवों उन वीतराग की, पूजन करना भैया।
सम्यग्दर्शन नियम- पूर्ण यह, सदा निभाना भैया।
अणुव्रत, प्रतिमा -धारण से तुम,सद्गति पाना भैया। (बहिना)

5. पर्युषण में हरी त्याग का, भाव सदा हो भैया।
विजातीय में विवाह गृह का, नहीं रचाना भैया।
विधुर,विवाही महिला का भी, परिणय न हो भैया।
न्याय मार्ग से चलो निरंतर, पुण्य बढ़ाओ भैया।(बहिना)

6. देश,जाति,कुल शुद्धि को भी, ध्यान में लाना भैया।
मिली बपौती पर न कुछ भी, ना इतराना भैया।
संयम मय ध्यानी बन निज -सुख को पाना है भैया।
सल्लेखन से स्वर्ग सुखी हो, शिवपुर जाना भैया। (बहिना)

मुंगावली, अशोकनगर (म. प्र.) 27 फरवरी 2024

मुनि मूरत के शिल्पी....

-आचार्य श्री आर्जवसागर जी

मुनि मूरत के शिल्पी गुरुवर।
मूलगुणों के दायक गुरुवर।
भव्यों के उद्धारक गुरुवर।
मोक्षमार्ग उपकारक गुरुवर।। 1।।

धर्म संस्कृति के रक्षक गुरुवर।
जीवों के संरक्षक गुरुवर।
जिन आगम के शिक्षक गुरुवर।
पंचाचार हि दक्षक गुरुवर।। 2।।

जिन प्रभावना कुशल रहे हो।
धर्म भावना भविक रहे हो ।
काव्यों के तुम रसिक रहे हो।
तत्व ज्ञान से लसित रहे हो।। 3।।

वचन नहीं वे प्रवचन देते।
'देखो' कहकर मन हर लेते।
नहीं काम का भार हैं देते।
गृहि न नाम प्रवचन में लेते।। 4।।

आओ आओ नहीं बुलाते।
जाओ जाओ नहीं बताते।
जाना आना समझ ना पाते ।
अतः गुरु अतिथि कहलाते।। 5।।

नहीं रात में बात वे करते।
ना हि रात में विचरण करते।
मौन धारते पापों में वे।
पूज्य कहाते मुनि-गण में वे ।।6।।

पर दोषों में अनदेखा पन ।
वचनों में था अन-निंदकपन।
जन-जन में था नित अपनापन।
त्याग तपों में पूरा तन मन।। 7।।

मुनि पनघट के कुंभकार थे।
मोक्ष नाव के कर्णधार थे।
सबमें इक पहचान थे गुरुवर।
मोक्ष मार्ग की शान थे गुरुवर।। 8।।

मंद मंद मुस्कान जहाँ थी।
दृष्टि जहँ करुणा भीगी थी।
नहीं बाध्य व बंधकपन था।
अनेकांत मय 'आर्जव' मन था।। 9।।

विनयाञ्जलि

-आचार्यश्री आर्जवसागर जी

('आचार्यश्री 108 विद्यासागर जी महाराज के समता पूर्वक समाधिस्थ होने पर विनयाञ्जलि')

अतिशय क्षेत्र थूबोन जी में शीतकाल के समय सिद्धचक्र विधान का अन्तिम दिन था और रात्रि में पौने दो बजे अचानक मेरी नींद खुली और तुरन्त कायोत्सर्ग किया। अश्रुधारा भी बह पड़ी और गुरुवर के लिए महाशांति की कामना की।

तुरन्त ही विचार व ध्यान में आया कि आज पिछली रात्रि में करीब पौने दो बजे मेरी नींद अचानक खुल गयी थी और मैंने कायोत्सर्ग किया था, इसका कारण क्या हो सकता है? हम जानते हैं कि सल्लेखना में उत्कृष्ट रूप से अड़तालीस मुनिवर क्षपक की सेवा निरत होते हैं ऐसा पूर्वाचार्य का कथन है। हो सकता है कि हमारे गुरुवर ने अपनी सल्लेखना में अड़तालीस मुनियों को याद किया हो और उसी बीच मेरी भी स्मृति गुरुवर को हो आयी हो, क्योंकि मैंने भी गुरुवर की लगातार 1984 से 1990 तक (छः वर्षों तक) लगन से सेवा की थी उनकी सिखाई साधना ने मेरे जीवन को महान बनाया है। और भावना यही थी कि कम से कम जीवन के अंत में साक्षात् गुरु सेवा का अवसर मुझे मिले किन्तु आचानक दिनांक 18-2-24 दिन रविवार तिथि माघ शुक्ला नवमी को समाधिस्थ संत शिरोमणि, सिद्धान्त वेत्ता, अध्यात्म चिन्तक मोक्षमार्ग अनुभवि, धर्म क्षेत्र उद्धारक, चैतन्य कृतियों और साहित्यिक कृतियों के निर्माता तथा देश के शुभ चिन्तक गुरुवर आचार्य प्रवर श्री 108 विद्यासागर जी महाराज भले ही आत्म दृष्टि से जयवन्त हैं लेकिन नश्वर काया या तन से अब यहाँ नहीं रहे।

अनुमान क्या पूर्ण विश्वास था भक्तों और शिष्यों को कि गुरुवर की काया अभी कम से कम दस-पन्द्रह वर्ष तक अमर रहेगी, लेकिन कर्म जन्य व्याधि के संयोग से स्वप्नवत् अल्प-काल में ही वह काया वियोग को प्राप्त हो गयी।

गुरुवर के नये, पुराने शिष्यगण गुरुवर से प्रत्यक्ष व परोक्ष में मिलने वाले अपूर्व-अपूर्व अनुभवों की वाट ताकते रह गये गुरुवर के अभाव में वातावरण में शून्यसान था अंधकार- सा छा गया।

वाट निहारते वे क्षेत्र व कला-कौशल के कार्य तथा देश उद्धार की येाजना रूप कार्य गुरुवर का गुणगान गाते हुए सदियों तक निहारते रहेंगे।

गुरुवर की चेतन अचेतन कृतियाँ गुरुदेव की आन्तरिक भावनाओं एवे आध्यात्मिक साधना की सुरभि सदियों तक बिखेरती रहेगी।

गुरुवर ने जो व्रतों का आशीष दिया और अपनी मृदु-मुस्कान से शिष्यों की साधना में उत्साह दिया वह उनकी कृपा-दृष्टि से फलता-फूलता रहे यही उत्कृष्ट आशा हरेक शिष्य और भक्त के दिल में बनी रहेगी।

गुरुदेव ने जो व्याधि में भी साहस पूर्ण कार्य कर अपनी त्यागी हुईं वस्तुओं की ओर नहीं निहारा और वैद्यों के कहने पर कि आप इस वस्तु (दूध, गन्ने का रसादि) का सेवन करेंगे तो जीवन पा लेंगे, इन्कार कर दिया। बल्कि यही कहा कि- यह तो मेरा त्याग है इसका नाम क्यों लेते हो। ऐसा कहकर महान दृढ़ता का परिचय दिया। ऐसा दृढ़ संकल्प सभी के लिए आदर्श बनकर रहेगा।

मुनियों के निचय या सन्निधि में चैत्य सिद्धान्त की जयघोष में

तत्त्वों का चिन्तवन, मनन करते हुये जिन-धर्मामृत का पान और णमोकार मंत्र का ध्यान करते हुये जो गुरुदेव ने इस नश्वर काया को मुस्कराते हुए वीरों के सदृश छोड़ दिया, उनका यह समाधि-मरण सल्लेखना उनके लिए वरदान और सद्गति का कारण बन गई और उनका जीवन धन्य हो गया।

समाधिस्थ गुरुदेव, देवलोक में जाकर विदेहों में इन्द्र रूप में जाकर तीर्थंकर प्रभु का दर्शन करते होंगे। उन्हें शीघ्र ही पुनः मनुष्य भव पाकर निर्ग्रन्थ पद प्राप्त कर सर्व अष्ट कर्मों से मुक्ति (मोक्ष) की प्राप्ति हो ऐसी हम मंगल कामना करते हैं। इत्यलं।

'मंगलभूयात्'

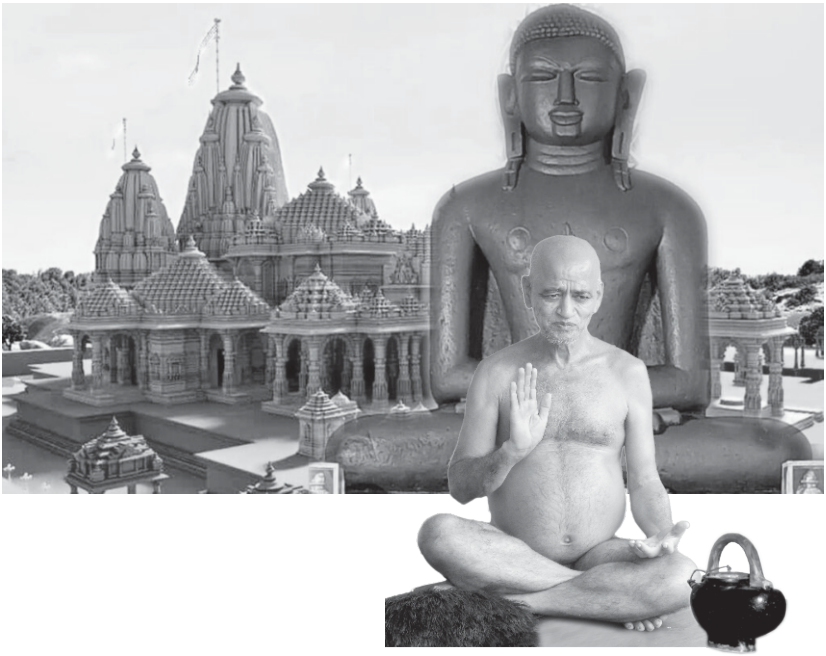

आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज का

जीवन परिचय

पूर्व नाम	-	पारसचंद जैन
पिता जी	-	श्री शिखरचंद जैन
माता जी	-	श्रीमती मायाबाई जैन
जन्मतिथि	-	11.9.1967, भाद्र शु. अष्टमी
जन्म स्थल	-	फुटेरा कलाँ, जिला- दमोह
बचपन बीता	-	पथरिया, जिला- दमोह (म.प्र.) में
शिक्षण	-	बी.ए. (प्रथम वर्ष) डिग्री कॉलेज, दमोह (म.प्र.)
ब्रह्मचर्य व्रत	-	19.12.1984, अतिशय क्षेत्र, पनागर (म.प्र.)
सातवीं प्रतिमा	-	1985, सिद्धक्षेत्र अहारजी (म.प्र.)
क्षुल्लक दीक्षा	-	8.11.85, सिद्धक्षेत्र अहारजी (म.प्र.)
ऐलक दीक्षा	-	10.7.1987, अतिशय क्षेत्र थूवोनजी
मुनि दीक्षा	-	31.3.1988, सिद्धक्षेत्र सोनागिरजी, महावीर जयन्ती।
दीक्षा गुरु	-	आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज
आचार्यपद	-	25.01.2015 (माघ शुक्ल षष्ठी) को (समाधि पूर्व आचार्यश्री सीमंधरसागर जी द्वारा इंदौर में)
कृतियाँ व रचनाएँ	-	धर्म-भावना शतक, जैनागम-संस्कार, तीर्थोदय-काव्य, परमार्थ-साधना, बचपन का संस्कार, सम्यक्-ध्यान शतक, आर्जव-वाणी, पर्यूषण-पीयूष, आर्जव-कविताएँ, जैन शासन का हृदय, आगम-अनुयोग, लोक -कल्याण (षोडसकारण) विधान, सदाचार सूक्ति-काव्य, अध्यात्म समयोदय, गुरु गुण-महिमा काव्य, आत्मोद्धार शतक, सन्मार्ग प्रभावना, श्री अंतादि शतक, विनयांजलि।
स्फुट रचनाएँ	-	जिनवर स्तुति, साम्य भावना, जम्बूस्वामी अष्टक, गोम्मटेश अष्टक, अहिंसा सूत्र गान, गिरनार स्तुति, विद्यासागर वंदनाष्टक, शांतिसागर विनयांजलि अष्टक, सम्मेदशिखर वंदन, जैन परंपरा गीत, मुनि मूरत के शिल्पी, विद्यागुरु विनयांजलि, गुरु विद्यासागर की छवि
पद्यानुवाद	-	गोमटेश थुदि, वारसाणुवेक्खा, इष्टोपदेश, समाधितन्त्र, द्रव्य-संग्रह, तत्त्वसार, प्रश्नोत्तर-रत्नमालिका, भक्तामर स्तोत्र।

आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज द्वारा रचित साहित्य